जापान का संक्षिप्त इतिहास

रामनारायण मिश्र बी० ए०
लिखित ।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा
प्रकाशित ।

---:o:---

तारा यंत्रालय काशी में मुद्रित ।

मूल्य ।=)
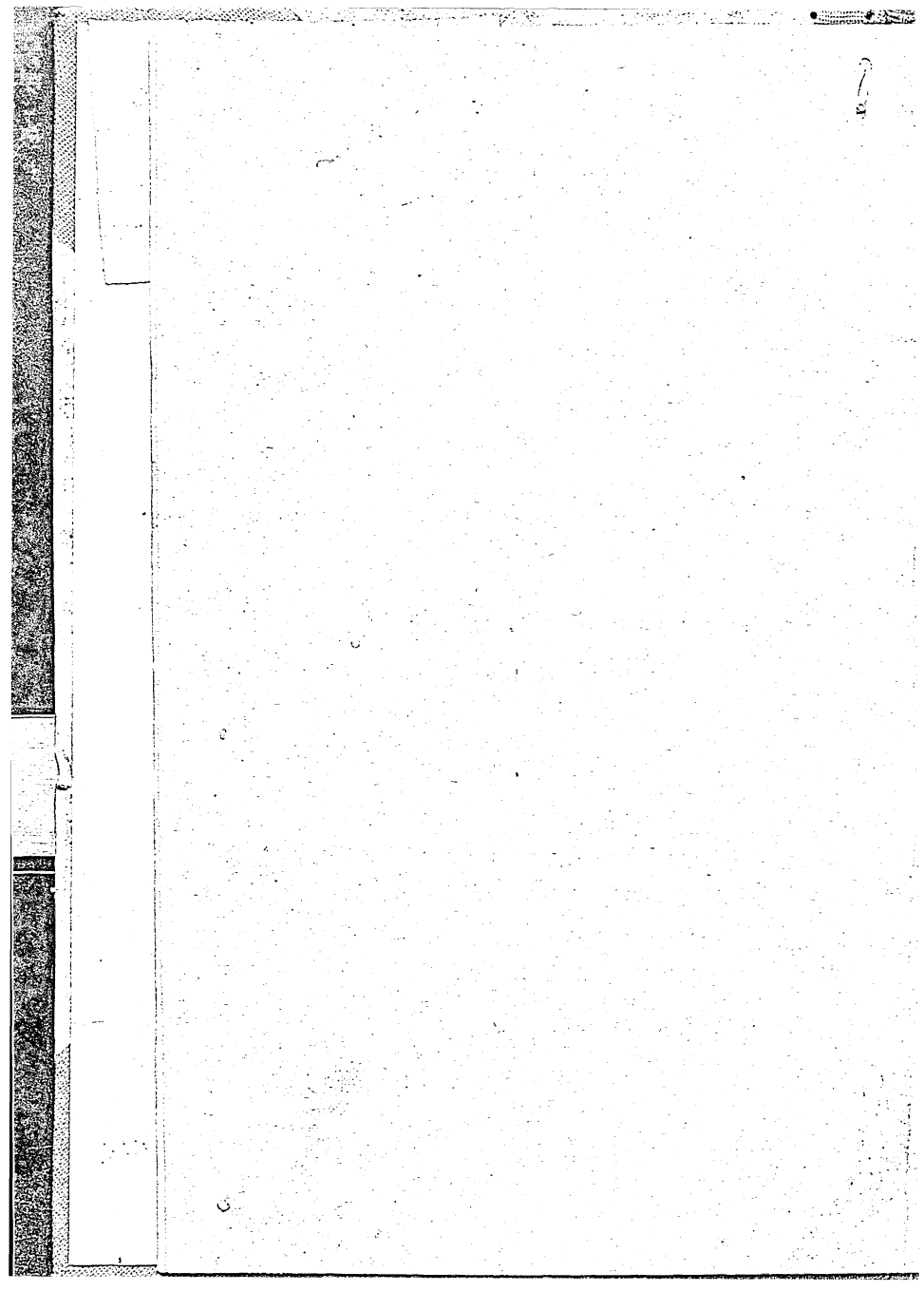
भूमिका ।

सं० १८९८ ई० में नागरीप्रचारिणी पत्रिका द्वारा मेरा लिखा हुआ जापान का इतिहास प्रकाशित किया गया था । मित्रों के अनुरोध से मैं उसको फिर से लिख कर नागरीप्रचारिणी सभा की भेंट करता हूं । इस पुस्तक में मुझे स्वयं बहुत सी त्रुटियां मालूम होती हैं एक तो समय के अभाव से मैंने अपनी पहिली पुस्तक ही के क्रम का अनुकरण किया है यद्यपि वह क्रम बदलने योग्य है । दूसरी कठिनाई यह है कि पुस्तकों के अतिरिक्त और कहीं से भी मुझे जापान का कुछ हाल मालूम नहीं हुआ । जापान की सभ्यता दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है, वहां का सच्चा वृतान्त वही लिख सकता है जिसको उस देश में जाने का सौभाग्य प्राप्त हो मुझे आशा थी कि एक मित्र से मुझे बहुत सहायता मिलेगी परन्तु न तो वे हिन्दी जानते हैं कि मेरे लेख को पढ़ कर सुधार देते और न मैं इतना समय दे सकता था कि उनके सामने इसका अङ्गरेजी अनुवाद कर सुनाता । इन कारणों से मैं आशा करता हूं कि मेरे मि सुझे क्षमा करेंगे यदि उनको यह पुस्तक जापान के स म्बन्ध में पुरा ज्ञान न दे सके । "जापान और रूस

युद्ध का कारण" मेरा लिखा हुआ नहीं है। उसके लिये मैं पण्डित रामगरीब चौबे का बाधित हूं।

अन्त में मेरी एक प्रार्थना है। पाठकवृन्द इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ें और इस बात पर विचार करें कि भारत की वर्तमान अवस्था में कौन कौन सी ऐसी बाते हैं जिनको हम लोगों को उसी तरह से तुरन्त छोड़ना चाहिए जिस तरह जापानवालों ने शोगन पद को, मिकाडो ने परदे को, जमीन्दारों ने अपने राजनैतिक स्वत्वों को, क्षत्रियों ने अपने अभिमान को, प्रजा ने विदेशियों से द्रोह को त्याग दिया। हम लोगों को आवश्यक है कि गम्भीरता से विचार करें कि कौन कौन से मुख्य दोष हैं जो हमको उन्नति से रोकते हैं। यदि विचारशील लोग, चाहे वे किसी मत के हों निष्पक्ष होकर चुनी हुई पांच छः बातें ऐसी बतला सकें तो वे कृपा कर मुझे लिखें। मैं यह नहीं चाहता कि लोग एक बड़ा निबंध लिख कर मेरे पास भेज दें। मैं चाहता हूं कि उत्तरदाता केवल उनको क्रमयुक्त नम्बरवार लिख कर भेज दें जिसमें मैं यह देख सकूं कि अधिकांश लोग किस बात पर सहमत होते हैं। इस अनुसन्धान का फल मैं किसी उचित स्थान पर समयान्तर में प्रकाशित करूंगा।

रामनारायण मिश्र।

जापान का संक्षिप्त इतिहास ।

प्रस्तावना ।

जापान बहुत से पहाड़ी टापुओं का समूह है । यहां के अधिकांश पहाड़ ज्वालामुखी पर्व्वत हैं जिनके कारण इस देश में भूचाल बहुत आया करते हैं । कहा जाता है कि सन् ईस्वी से २८६ वर्ष पहिले एक ऐसा भूकम्प आया था कि एक स्थान पर भूमि ऊपर उठ गई जिसको आज कल फूजी पर्वत कहते हैं और एक दूसरे स्थान पर पृथ्वी धसकर झील बन गई जिसका नाम बिवा झील है । यह ५० मील लम्बा और इसकी सबसे अधिक चौड़ाई २० मील है । यहां कई छोटी छोटी परन्तु बड़ी तेज़ नदियां और बहुत से जंगल भी हैं ।

इस देश में सोने, चांदी, तांबे, कोयले, लोहे और पत्थर की बहुत सी खाने हैं । सोना बहुत अच्छा तो नहीं होता पर इसे विदेशी अपने देश में बहुत दिनों तक ले जाते रहे । केवल पुर्तगाली ही प्रत्येक वर्ष छ लाख पौंड का सोना चांदी ले जाते रहे और वे ८० वर्ष तक जापान में रहे । कोयले और लोहे की खानों के कारण जापान के निवासियों ने आज कल के कला कौशल और वैज्ञानिक यंत्रों के समय में अद्भुत उन्नति की है । अभी बहुत समय नहीं हुआ कि पहिला जहाज जो जापान वालों के पास था वह इङ्गलैंड वालों से मोल लिया गया था और जिस समय वह समुद्र के किनारे पहुंचा तो बहुत से ज़ापानी उसको आश्चर्य की दृष्टि से देखते थे, यद्यपि उसी समय कुछ साहसी जापानियों ने कूदकर उसको अपने हाथ

ने उनके लिये भी कुछ बन्दर खोल दिये और उनके एक प्रतिनिधि को जापान में रहने की आज्ञा दी।

जब पेरी पहिले आया था तो राजा से लेकर प्रजा तक जापान में विदेशियों को अधिकार देने के विरुद्ध थे। वे कहते थे कि हमारा देश देवताओं का निवासस्थान है यहां म्लेच्छों का क्या काम। परन्तु हर एक देश में कुछ दूरदर्शी लोग भी हुआ करते हैं, यद्यपि इनकी संख्या कम होती है और बहुधा जनसमूह के ये विपरीत होते हैं परन्तु कालान्तर में इन्हीं की बात सच्ची ठहरती है। जापान में भी ऐसाही हुआ। कुछ थोड़े से दूरदर्शी बुद्धिमान लोगों ने अनुभव कर लिया कि इन विदेशियों का समागम अन्त में लाभदायक होगा और यह समझ कर नवयुवक लोगों ने विदेश यात्रा आरम्भ करदी। इसपर सारे समाज में कोलाहल मच गया। पुराने ढङ्ग के लोग अपनी पवित्र भूमि में विदेशियों के आने पर और वहां के निवासियों के विदेश जाने पर बहुतही कुढ़े, यहां तक कि उन्होंने लगभग ५० विदेशियों को मार डाला और अङ्गरेज़ प्रतिनिधि की कई कोठियों को बारुद से उड़ा दिया और जो जापानी नव शिक्षित उन्नत देशों से शिक्षा लाभ उठाकर आते उनको घृणा की दृष्टी से देखते। जापान के इतिहास का यह अङ्ग भारत की वर्तमान अवस्था से समता रखता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिन जापान निवासियों ने विदेश में पहिले पहिल शिक्षा पाई उन्होंने जापान की काया पलट कर दी। यद्यपि बैरिस्टर और डाक्टर होना बुरा नहीं है परन्तु हमारे भाई अन्य देशों से केवल इन्हीं बातों की शिक्षा पाकर आते हैं और देश का वैसा उपकार नहीं करसकते जैसा कि जापान वालों ने किया। भारत की दुर्दशा को दूर करने का यत्न अब तक "अधिकांश" ऐसे लोगों ने किया है कि जिन्होंने किसी अन्य देश में अपना पैर भी नहीं रखा। स्वामी दयानन्द सरस्वती,

पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, माननीय महादेव गोविन्द रानाडे के चित्त में धर्म, देश और समाज की उन्नति के जो भाव और जितना जोश था यदि उसका आधा भी प्रत्येक हिन्दू हृदय में जिसने उन्नत देशों में शिक्षा पाई हो अथवा भ्रमण किया हो, होता तो हमारे देश की यह अवस्था न रहती। मैं ने जान बूझकर "अधिकांश" शब्द का प्रयोग किया है क्योंकि रमेशचन्द्रदत्त और उमेशचन्द्र बनरजी ने जो उपकार किए हैं उन्हें कौन भूल सकता है।

जापान वाले कामोडोर का अबलों आदर करते हैं। यद्दो की खाड़ी के पास एक गांव में पेरी का स्मारक रखा है क्योंकि जापान के लोग समझते हैं कि उनकी उन्नति का कारण पेरी ही हुआ है।

इतिहास।

जापानियों के पुराणों के अनुसार जापान का राजा भारतवर्षीय प्राचीन राजाओं की नाईं सूर्य कुल से उत्पन्न है पर उन लोगों में सूर्य एक देवी मानी जाती है। कहा जाता है कि पहिले सात देवता स्वर्गलोक से पृथ्वी पर आकर बास करने लगे। इसके अनन्तर सात और देवता पृथ्वी पर उत्पन्न हुए और इन्हीं के वंश से वर्तमान समय के राजा हैं। इनकी गणनानुसार पहिला राजा जीम्भु सन् इस्वी से ६६० वर्ष पहिले गद्दी पर बैठा और तब ही से इनके संवत् का आरम्भ है। आज कल (१६०४) उनका २५६४ संवत् है। उस समय से अब तक १११ राजा और ११ रानियों ने शासन किया। इन में से कोई कोई उनके कथनानुसार १४१ और १४३ वर्षों तक जीवित रहे।

वर्तमान जापानी लोग असल में इस देश के रहने वाले नहीं हैं। यहां की असल रहनेवाली आईनो जाति है जिसका

रहन सहन जंगलियों से मिलता था। सन् इस्वी के २६० वर्ष से लेकर २१५ वर्ष पहिले तक दक्षिण पश्चिम से कई जातियों ने आईनों लोगों पर धावा किया। इनमें चीनी, मलायन, मैपुयन और कदाचित कोरियन जाति के लोग थे। ये सब मिलकर एक जाति बन गए जो आजकल जापानी कहलाते हैं। "जापान" शब्द भी चीनी भाषा का है जिसका अर्थ है "वह भूमि जहां सूर्य निकले"। वहां के लोग अपने देश को "दाई निप्पन" या केवल "निप्पन", "निहन" कहते हैं।

बहुधा विदेशी लोग यह कह बैठते हैं कि जापानी सभ्यता नवीन और योरोपियन है परन्तु जापान बहुत प्राचीन काल से सभ्य चला आता है। इस छोटी सी पुस्तक में उन राज्य वंशों के सविस्तर वर्णन करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि जिन्होंने समय समय पर इस देश में राज्य किया।

राज्यप्रणाली।

राजा को "मिकाडो" कहते हैं जिसका अर्थ "बड़ा द्वार" है। राजा प्राचीन काल से बड़े सादे वस्त्र पहिनता था और सादा भोजन करता था। सन् ११६० ई० से जापान में दो प्रकार के राजा शासन करने लगे। यह दूसरे राजा "शोगन" कहलाते थे। यह प्रबन्ध स० १८६७ ई० तक रहा। इनको प्रजा देवता समझती थी और इनकी स्त्रियों तथा मंत्रियों के अतिरिक्त और कोई इनका मुख नहीं देख सकता था। यदि किसी को कभी इनके सामने जाने की आज्ञा भी मिलती थी तो ये परदे के भीतर तिनकों और पत्तों की गद्दी पर बैठ कर मिलते थे। ये भूमि पर कभी पैर नहीं रखते थे और इनका पहना हुआ वस्त्र जला दिया जाता था और जिस थाली में वे एक बेर खाते थे पुनः उसको नहीं बरतते थे। ये पहिले लिखा जा

चुका है कि यथार्थ में राजा के पद पर "मिकाडो" ही थे पर एक साथ दो राजा होने का कारण यह हुआ कि दसवीं शताब्दी के लगभग पूरब की ओर से बहुत से जङ्गली लोग दल बाँध कर कभी कभी धावा मारते थे। इसको रोकने के लिये बड़े बड़े सर्दार नियत हुए। ये सरदार "टाइरा और मिनमोटो" कहलाते थे! इनके वंश के लोग आपस में उच्च पद प्राप्त करने के हेतु लड़ने लगे। दसवीं शताब्दी से यह लड़ाई बहुत भयंकर होगई और राजा जब देखता कि एक दल ने विद्रोह मचाया है तो वह दूसरे दल को उसे शान्त करने के लिये भेजता। इससे दोनों दलों में शत्रुभाव और भी बढ़ता ही गया यहां तक कि १२वीं शताब्दी के मध्य में "टाइरा" दल के सर्दार "कियोमोरी" ने अपने शत्रुओं पर जय पाई और उनके सब सर्दारों को मार डाला, केवल मिनामोटो दल के सबसे बड़े सर्दार के दो पुत्रों को जो बहुत छोटे थे छोड़ दिया पर यह किसे मालूम था कि येही लड़के बड़े होने पर अपने दल का बदला शत्रुओं से लेंगे। इधर कियोमोरी का प्रभाव बढ़ताही गया और ११८० में मंत्री होने पर उसने अपनी कन्या का विवाह उस समय के राजा से किया और उससे लड़का होने पर अपने नाती को गद्दी पर बैठा देने के लिये राजा पर दबाव डाला। अपने कुटुम्ब को इस प्रकार उच्च से उच्च पद पर चढ़ा कर सन् ११८१ में कोयोमोरी ने प्राण त्याग किया। इस के मरते ही इसके शत्रु के दोनों लड़कों ने जिनको इसने छोड़ दिया था बड़ी सेना एकत्रित की और ११८५ में कियोमोरी का दल कुछ तो समुद्र की लड़ाई में और कुछ डूब कर नष्ट होगया और मिनमोटो दल का फिर अधिकार जमा। इसी तरह जब सं० ८१३ ई० में आईनो जाति ने विद्रोह किया था तो एक नया पद बनाया गया जिसपर सब से पहिले एक जमीन्दार नियुक्त हुआ। उसी पद का अधिकार अब मिनमोटो दल के पुरुष को दिया गया और उसको

शोगन कहने लगे। ये अपने को राजा समझने लगे। दोनों दलों में जो वैर भाव था उसको नष्ट करने के लिये इन्होंने अमीर लोगों को वर्ष में छः मास तक राजधानी (यद्दो) में रहने की आज्ञा दी और जब वे छः महीना बाहर रहें तो अपने स्त्री और बालकों को वहीं छोड़ जाने की आज्ञा हुई।

जब स० १८५६ के लगभग योरोपियन लोगों को जो जापान आने जाने की आज्ञा मिली थी और जिसका वर्णन ऊपर होचुका है वह शोगन ही लोगों ने दी थी। "मिकाडो" के अनुयायी इस बात से अप्रसन्न थे और इन्होंने सारे देश में डंका बजाया कि "मिकाडो" की जय हो और म्लेच्छों का क्षय। जिस शोगन ने आज्ञा दी थी उसके मरने पर उसका लड़का गद्दी पर बैठा। वह बारह वर्ष का था, इस लिये राजकाज एक मंत्री को सौंपा गया पर शोगन युवावस्था ही में मरगया। इसके अनंतर मिकाडो का देहान्त हुआ और उसका लड़का गद्दी पर बैठा। इधर एक दूसरा पुरुष शोगन पद पर सन् १८६७ में बैठाया गया। बस! यही समय था कि जब जापानियों की किस्मत का फैसला होना था। नव युवक शिक्षित समाज के सामने योरोप की शासन प्रणाली का आदर्श था और उनके चित्त जापान को संसार की सभ्य जातियों में गिने जाने के लिये उत्तेजित होरहे थे एक देशभक्त जमीन्दार ने शोगन को यह पत्र लिखा कि "हे महाराज आपको अपना सब अधिकार राजा मिकाडो को देदेना चाहिए और ऐसा करने से आप एक ऐसी नेव डालेंगे जिससे जापान वाले अन्य देश वालों से बराबरी के साथ मिल सकेंगे और जो अधिकार उनको हैं हमको भी होंगे"। शोगन ने इस प्रस्ताव को उचित समझकर उत्तर दिया कि "यद्यापि शोगन के पद पर मेरा अधिकार बाप दादा के समय से चला आता है पर आज कल राज्य की दशा बहुत ही बिगड़ी हुई है इस लिये मैं उचित समझता हूं कि अपना अधिकार राजा को देदूं।"

ऊपर लिखा जा चुका है कि मिकाडो घर से बाहर नहीं निकलता था। स०१८६८ ई० में जब शोगन अपने पद को स्वयं छोड़ने पर तय्यार हो गया था तो राजमंत्री ने जो एक शिक्षित और उन्नत समाज का पुरुष था राजा से परदे के बाहर आने के लिये कहा और इस प्रकार प्रर्थना की कि "सात शताब्दी बीत गई हमारे महाराज तब से परदे में रहते आए हैं और उन्होंने भूमि पर कभी पैर नहीं रखा। बाहर क्या होता है इसका समाचार महाराज के पवित्र कानों तक नहीं पहुंचता इस लिये आज से इस झूठी मर्य्यादा को भुला दीजिये।" राजा ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और राजधानी यद्दो कायटो से बदल दी गई और उसका नाम टोकियो रक्खा गया। राजा की अवस्था इस समय १८ वर्ष की थी। अन्य देशों के सम्राटों पर पत्र द्वारा विदित कर दिया गया कि जापान का पूरा अधिकार शोगन के पद त्यागने पर मिकाडो के हाथ में आया। इस पत्र पर राजा मुतसुहितो का जो अब तक शासन कर रहे हैं हस्ताक्षर था और यह पहिला अवसर था कि राजा का नाम लोगों पर प्रगट किया गया।

जापान देश में अन्यान देशों की तरह प्राचीन समय में प्रत्येक ज़मीन्दार अपने स्थान में एक छोटा राजा था और स्वतंत्रता के साथ जो चाहता था सो कर लेता था। विचारशील युवा जापानियों ने देखा कि इस अवस्था से देश की किसी प्रकार से उन्नति नहीं होसकती। ज़मीन्दारों ने भी इस बात को स्वीकार किया। अन्त में निश्चय किया गया कि सब जमीन्दार अपनेको राजाकी प्रजा समझें और किसानों से कह दिया गया कि तुम लोग आज से मिकाडो को अपना ज़मीन्दार समझो। इस प्रकार छोटी छोटी जातियां टूटकर और एक में मिलकर एक बड़ी जाति होगई। सन् १८७१ में सब ज़मीन्दार और धनाढ्य लोग टोकियो में मिले और उन्होंने अपना

अपना सिर राजा के आगे झुकाया। महामंत्री ने इस सुप्रबन्ध का शुभ समाचार सारे देश में प्रचारित किया। यह जापान के इतिहास में "बलिदान पर्व" है। शोगन राजा से लेकर एक सामान्य नव युवक तक अपना अधिकार और ऐश्वर्य स्वदेश की उन्नति के लिये बलिदान करने पर आरूढ़ है। यद्यपि उन्नतशील दल की विजय होती जाती थी तिस पर भी "लकीर के फकीर" आन्दोलन करते ही गए। एक बेर विद्रोह भी खड़ा किया गया और तीन दिन तक घोर युद्ध होता रहा जिसके अनन्तर मिकाडो का प्रबल राज्य स्थापित हुआ।

स० १८७१ ई० में वहां की छोटी जाति के लोगो को भी जापान देश के निवासी होने के सब अधिकार प्राप्त हुए। डाकखाना खोला गया, तार जारी की गई। रुपया बनाने के लिये टकसाल खोले गए। स० १८७३ में पहिले पहिले जापानियों ने रेल चलाई। अमेरिका और योरोप के देशों में राजदूत भेजे गए और राजा की ओर से आज्ञा हुई कि कोई मनुष्य नगर में बिना कपड़ा पहिने न निकले। शीतला से बचने के लिये टीका लगाया जाने लगा। सब अफसरों और राज्यपदाधिकारियों को आज्ञा हुई कि अपने देश की ढीली ढाली पोशाक को बदलें और योरोपियन पोशाक पहिनें। परन्तु वास्तव में जापान वाले दो प्रकार के वस्त्र पहिनते हैं जितने बड़े बड़े धनाढ्य और प्रसिद्ध पुरुष हैं सरकारी कामों के समय योरोपियन पोशाक और घर पर सीधी सादी देशी पोशाक पहिनते हैं। जिन लोगों ने जापानी लड़ाई के सवारों और सिपाहियों की पोशाक तस्बीरों में देखी होगी वे जानते हैं कि वे लोग बिलकुल योरोपियन प्रतीत होते हैं केवल आकृति का भेद है।

शासन का प्रबन्ध राजा ने अपने हाथ में रक्खा और अपनी सहायता के अर्थ तीन राज्यमंत्री और एक कौंसिल (सभा) नियत की। स० १८७५ में भिन्न भिन्न प्रान्तों के गवर्नर

टोकियो में एकत्रित हुए और सर्वसाधारण के उपकारी विषयों पर विचार किया गया। तीन वर्ष पीछे भिन्न भिन्न प्रान्तों की अलग राज्य सभाएं स्थापित हुईं जिनमें उसी प्रान्त के टैक्स, मालगुज़ारी इत्यादि विषयों पर विचार होने लगा। इसके सभासद होकर वेही लोग वोट (सम्मति) दे सकते थे कि जो अच्छी तरह लिख पढ़ सकें और वार्षिक कम से कम ५ डालर (१५ रुपया) मालगुज़ारी देते हों। हर एक वोट देनेवाले को अपना नाम और जिसके लिये वोट दे उसका नाम एक कागज़ पर लिखकर एक बक्स में डालना पड़ता था। इन प्रान्तिक राज्यसभाओं के करने से तात्पर्य यह था कि लोग क्रम से एक मुख्य राज्य सभा (पार्लियामेण्ट) द्वारा शासन करने योग्य बनें जिसके स्थापित करने की प्रतिज्ञा मिकाडो ने स० १८६८ में ही कर ली थी। जब मिकाडो ने देखा कि लोग प्रतिनिधि सभा द्वारा शासन करने योग्य बन रहे हैं तो स० १८८१ में सूचना दी गई कि सं० १८९० में हम मुख्य राज्यसभा स्थापित करेंगे जिसमें प्रजा की ओर से प्रतिनिधि भेजे जायंगे। इङ्गलैंड की तरह मुख्य राज्य सभा के दो विभाग रखने के लिये राजा ने धनाढ्य लोगों और विद्वान युवा जनों को लार्ड इत्यादि की पदवी देना आरम्भ कर दिया। स० १८८५ में पुरानी कौंसिल, मंत्री का पद इत्यादि तोड़ दिए गए और कैबिनेट अर्थात् राज्य मंत्रियों की एक सभा स्थापित हुई। ८००० अनावश्यक पदों को तोड़कर बहुत सा व्यर्थ खर्च बचा लिया गया और बड़े बड़े पदों पर ऐसे लोग नियत हुए कि जो विद्या और बुद्धि के लिये मशहूर थे। सं० १८८६ के फरवरी मास में न्यायालय खोले गए और न्याय करने के लिये जज नियत हुए। एक फ्रान्सीसी द्वारा नियम (कानून) बनवाए गए। इसके पहिले न तो कचहरी थी और न राजा ही नियमानुसार न्याय करते थे। जब योरोपियन लोग बसने लगे और उन्होंने किसी अभियोग में पकड़े जाने पर ऐसे हाकिमों के सामने जाना अस्वीकार

किया तो शिक्षित जापानियों ने इस ओर भी ध्यान दिया। इसी वर्ष अन्य धर्मावलम्बियों को दुख देने, लोगों के पत्र पढ़ने, स्वतंत्रता के साथ बोलने और लिखने की रुकावट को भी दूर करने की आज्ञा दी गई। ये सब संशोधन ऐसी शीघ्रता से हुए कि इस परिवर्तन को लोग "भूकंप" कहते हैं।

सं० १८६० में पार्लियामेण्ट अर्थात् मुख्य राज्यसभा भी स्थापित हुई। इसके दो भाग हैं, एक में कुछ तो ऐसे लोग होते हैं कि जिनके बाप दादा धनाढ्य और प्रतिष्ठित होते चले आए हैं। वे जीवन पर्यन्त इसके सभासद रहते हैं।

इस सभा के सभासद तीन प्रकार के हैं एक वे कि जो राजा के कुटुम्बी हैं। दूसरे वे जिनको विद्या बुद्धि और ऐश्वर्य के कारण राजा नियत करता है जिसमें वे शासन में सहायता दें और तीसरे प्रकार के वे सभासद हैं जिन्हें धनाढ्य ज़मीन्दार लोग चुनकर भेजते हैं। प्रतिनिधि राज्यसभा के सभासदों की अवस्था ३० वर्ष से ऊपर होनी चाहिए। इसमें ईसाई सभासद भी हैं।

आरम्भ में इस राज्यप्रणाली के नए होने के कारण एक दो बेर गड़बड़ भी हुआ। एक वर्ष कुछ लोगों ने राजा के सब प्रस्तावों का विरोध किया। इस पर १८९१ में राज्यसभा राजा की आज्ञानुसार बन्द कर दी गई। जब दूसरी बेर सभासद चुने जाने लगे तो किसी किसी स्थान पर उपद्रव भी हुए परन्तु इसके पीछे अब तक सब काम सुन्दरता से चला जाता है।

जापानी सेना।

जापान के लोगों को बहुत प्राचीन काल से लड़ने भिड़ने

का शौक है। हर एक जापानी अपने पास तलवार रखता था और जब यह नियम बना कि लोग सड़कों पर तलवार लेकर न जाया करें तो लोगों ने बड़ी कठिनाई से इस नियम का पालन किया परन्तु जिस समय प्रान्त प्रान्त के राजा (Feudal lords) अलग अलग थे तो उनके साथ कुछ लड़ने वाले लोग भी रहा करते थे। इनको "शिउज़ोकु" या "सामुराई" कहा करते थे। ये लोग भारतवर्ष की क्षत्री जाति की तरह एक विशेष जाति बन गए थे। जब प्रान्तिक राजप्रबन्ध टूट गया तो २० लाख "शिउज़ोकु" बेकार हो गए और इसी समय यह नियम भी हुआ कि प्रत्येक जापानी को लड़ने जाना आवश्यक है। जो इससे बचना चाहे २७० डालर दे। तीन वर्ष तक हर एक २० वर्ष की उमर से बड़े जापानी युवा को सेना में काम सीखना और तीन वर्ष बीतने पर ५ वर्ष तक कभी कभी कवायद करने जाना आवश्यक कर दिया गया। यह नियम बनतेही जापानी "क्षत्री" लोग बिगड़ उठे कि किसान, व्यापारी और राज मज़दूर उनके साथ साथ लड़ने की आज्ञा कैसे पा सकते हैं। स० १८७७ में इन लोगों ने बलवा (विद्रोह) कर दिया और प्रजा से बनी हुई जो सेना तय्यार की गई थी वह अभी ऐसी निपुण नहीं हुई थी कि इनका सामना कर सके। इसी समय (Standing army) वैतानिक सेना का भी सुधार किया गया। पहिले फ्रेञ्च और फिर जर्मन सेनापति नियत किए गए और लड़ाई के वैज्ञानिक नियम कि जो पश्चिमी देशों में प्रचलित हैं जारी किए गए।

अवैतनिक सेना में २० वर्ष के ऊपर के युवा लिए जाते हैं और इनको तीन वर्ष तक काम सीखना पड़ता है। परन्तु धन के अभाव से जितने आदमियों को लेना चाहिए वे सब सेना में नहीं लिए जासकते थे। स० १८९७ में ३५,०००७ आदमियों को नियमानुसार लेना चाहिए था पर

उनमें से सिर्फ २०००० आदमी भरती किए गए। जो पूर्ण रूप से कवायद सीख लेता है वह "जातीय सेना" में भरती होता है। यह सेना ऐसे विशेष अवसर पर जैसे कि रूस और जापान की लड़ाई है, बुलाई जाती है। सेना की वर्दी योरोपियन ढङ्ग की है।

सैनिक शिक्षा ऐसी उत्तम होती है कि सवारों को छोड़ कर और सब सिपाही चार महीने बारिक में रहने पर लड़ने के लिये तय्यार होजाते हैं। इसका विशेष कारण यह है कि कप्तान इत्यादि जितने उच्च पदाधिकारी हैं वे नवीन प्रणाली में पूरे निपुण हैं और बहुत से लोगों ने विदेशों में इसकी शिक्षा पाई है। एक समय था कि जब सब सेनापति विदेशी थे, अब सब सुशिक्षित जापानी हैं। बड़ी प्रशंसा की बात यह है कि जापानी सिपाही नशेबाज़ और दङ्गा फ़साद करने वाले नहीं हैं। जापानी बाजारों में बहुधा सिपाही लोग या तो चाह पीते हुए या कोई पुस्तक मोल लेते हुए दिखलाई देते हैं। परन्तु, मिस्टर स्टेड के कथनानुसार कोई सिपाही भी बहुत से अमेरिकन और योरोपियन सिपाहियों की तरह नशे में चूर, दङ्गा फसाद करता हुआ कभी देखा नहीं गया, ओसाका में एक बन्दूक ढालने का कारखाना है वहां एक विशेष प्रकार की बन्दूक ईजाद की गई है। टोकियो के कारखाने में ४०० बन्दूकें संगीन सहित और २५०००० छर्रे एक दिन में तय्यार होते हैं। यहां गोले और गोलियां भी बनाई जाती हैं।

जापान के जंगी और तिजारती जहाज़।

जापान टापू है। इस कारण समुद्र में सफर करने के लिये यहां बहुत पुराने समय से नावें, बड़े बड़े डोंगे और एक प्रकार

के जहाज़ बना करते थे पर जब यहां के लोगों ने विदेशियों से मिलना जुलना छोड़ दिया तो बडे बड़े जहाज़ बनाने पर दंड दिये जाने की राजाज्ञा हो गई। कामोडोर पेरी के समय में अङ्गरेजी और रूसी जहाज़ किनारे पर आजाया करते थे पर उनका कभी भी आदर सत्कार नहीं किया गया। जब जापान का पुनरोद्धार हुआ तब भी जहाज़ बनाने में कोई विशेष उन्नति स० १८७७ तक नहीं हुई और स० १८८५ तक जापानी जहाज़ जापान के किनारे ही किनारे रहते थे। सं० १८९० तक १४५० जहाज़ योरोपियन नमूने के तय्यार होगए थे। सं० १८९६ में जापन गवर्मेण्ट ने आज्ञा

प्रकाश की कि जो लोग जाहज़ बनाएगें या चलाएगें उनको सरकार की ओर से धन की सहायता मिलेगी। इस आज्ञा के प्रकाश होते ही योरोप, अमेरिका और औस्ट्रेलिया तक जहाज़ चलानेवाली कम्पनियां तय्यार होगई। कुछ दिन पीछे दूसरी आज्ञा प्रगट की गई कि जो लोग सरकार से सहायता की इच्छा रखें उन्हें यह दिखलाना होगा कि सब काम स्वदेशी वस्तुओं और मनुष्यों के द्वारा होता है। सं० १९०१ में जो सरकारी बजट (आय व्यय का वार्षिक लेखा) तय्यार हुआ उसमें ६८७७९५२ येन (जापानी रुपया) अर्थात् १ करोड़ ३५ लाख रुपया जहाज़ों की उन्नति के लिये रखा गया जिस का हिसाब इस प्रकार है। २२८१६१ येन खास जापान में चलने वाले जहाज़ों के लिये, ७६७,७६६ येन बाहर जाने वाले जहाज़ों के लिये और ५५४४७७५ येन उन दिशाओं में जहाज़ चलाने के लिये जिधर जापानी जहाज न चलते हों। इसके अतिरिक्त २७७२५० येन जहाज बनाने वालों की सहायता के लिये और ३०,००० येन जहाजियों की शिक्षा और उनकी जान बचाने का उचित प्रबन्ध करने के लिये रखा गया। इससे यह न समझ लेना चाहिये कि केवल सरकारी ही रुपये से जहाज़ चलाए जाने लगे, लोगों

ने कम्पनियां क़ायम की जिसमें हज़ारों शेअर (हिस्से) लोगों के थे। जैसे जैसे लोगों का उत्साह सरकारी सहायता से बढ़ता गया वैसेही सरकार ने रुपया देने के नियम भी कठिन करदिए। पहिले जो जहाज बनाए और चलाए जाते उसको सहायता दी-जाती थी फिर जो स्वदेशी और देशहितैषी उद्देशों से जहाज चलाते उनको दी जाने लगी। अब सरकार उनको सहायता देती है कि जो जहाजों की लम्बाई चौड़ाई, उनकी चाल ढाल में कुछ उन्नति दिखलाते हैं जिसका नतीजा यह हुआ कि इस समय सुन्दर से सुन्दर, मज़बूत से मज़बूत जापानी जहाज़ सारे संसार की परिक्रमा करते हैं। जब पहिले पहिल जहाज़ चले तो सिर्फ जहाजी ही जापानी थे और बाक़ी सब लोग विदेशी थे। कप्तान इत्यादि योरोपियन ही हुआ करते थे। अब थोड़े से विदेशी रहगए हैं और सब जापानी हैं। नागासाकी में बड़े बड़े जहाज बनाने का कारखाना है और छोटे जहाज़ों के कई और कारखाने हैं। जापान के मशहूर मशहूर जहाज सब इ-ङ्गलैंड के बने हुए हैं। अब सरकार से उन लोगों को जो विदेश में जहाज़ बनवाते हैं उन लोगों की अपेक्षा आधी सहायता मिलती है कि जो जापान ही देश के बने हुए जहाज़ चलाते हैं। इस प्र-कार ५ वर्ष में जहाज़ों की संख्या २० गुनी होगई और इस उ-न्नति को देख कर बड़ी बड़ी सभ्य जातियां आश्चर्य करती हैं। जङ्गी जहाज भी इङ्गलैंड देश के बने हुए थोड़े दिनों तक काम में लाए जाते थे और पसन्द भी किए जाते थे। यद्यपि कुछ जहाज़ अमेरिका, जर्मनी और फ्रान्स के बने हुए भी हैं पर इ-ङ्गलैंड का नमूना जापानी लोग बहुत पसन्द करते हैं और जो जहाज़ जापान में बनाए जाते हैं सब उसी नमूने के होते हैं। जापान के जङ्गी जहाज़ों में बहुत से लोग अवैतनिक काम क-रते हैं। योकुसुका में जङ्गी शिक्षा देने के लिये एक कालेज है। इसकी पढ़ाई बहुत कठिन है। तिसपर भी १६०१ में १४०० और १६०२ में १७०० विद्यार्थियों ने पढ़ने की इच्छा प्रगट की।

लैक्कर का काम अर्थात् धातु और काठ के खिलौनों और बर्तनों पर वारनिश चढ़ाना इत्यादि जिनके लिये जापान बहुत मशहूर है

सब प्रकार के स्कूल और कालेजों के खोलने के साथ साथ विदेश में विद्यार्थियों के भेजने का विशेष प्रबन्ध किया गया। स० १९०२ में कृषी और व्यापार विभाग की ओर से १४ जापानी पश्चिमी व्यापार की शिक्षा पाने के लिये भेजे गए। सैकड़ों विद्यार्थियों में से चुन कर ये लोग भेजे जाते हैं। उसी सन के मार्च महीने तक तीन विद्यार्थी शिक्षा विभाग की ओर से, ३२ टोकियो विश्वविद्यालय से, २२ कायटो विश्वविद्यालय से, ९ उच्च श्रेणी के व्यापारी स्कूलों से, ११ नार्मल स्कूलों से, ८ टोकियो के शिल्पविद्यालय से, २ ओसाका के शिल्प विद्यालय से, ४ टोकियो के Fine Art स्कूल से, २ टोकियो के गन्धर्वविद्यालय से, २ टोकियो के विदेशीय भाषा सिखाने वाले स्कूल से, ३ सपोलो कृषिविद्यालय से, २ लड़कियों के हाई स्कूल से और १ नं० ५ हाई स्कूल से भेजे गए। इस प्रकार केवल शिक्षा विभाग की ओर से १०१ जापानी केवल एक वर्ष के अन्दर जर्मनी, फ्रान्स, इङ्गलैंड, अमेरिका इत्यादि देशों को भेजे गए। इसी तरह से दूसरे विभाग भी बराबर विद्याध्ययन के लिये विद्यार्थियों को विदेश भेजते रहते हैं। राजकोष विभाग की ओर से उसी साल ३ जापानी बाहर गए जिनमें से एक समुद्र के किनारे के घाट इत्यादि बनाने की रीति सीखने गया था।

कौण्ट ओकुमा ने जो कि जापान के एक विख्यात पुरुष हैं यह देखकर कि जापान के युनिवर्सिटी के एक कमरे में कानून अङ्गरेज़ी में पढ़ाया जा रहा है, दूसरे में फ्रेंच में, तीसरें मे जर्मनी में, यह निश्चय किया कि इसको दूर करना चाहिए। इस लिये सेन्समनगाको नाम का एक कालेज खोला गया जिसमें हर एक विषय पर जापानी में लेकचर होने लगे। पाहिले

बड़ी कठिनाई हुई। शिक्षित जापानी अध्यापक तो मिल गए परन्तु जापानी भाषा में सिवाय कविता के और कुछ भी नहीं था। एक दो ग्रन्थ इतिहास के मिल जाते थे कि जो चीनी भाषा में थे। इस पर एक विभाग नया खोला गया जिसके द्वारा मुख्य मुख्य विषयों पर जापानी भाषा में पुस्तकों का अनुवाद किया जाने लगा। पहिले पुस्तकों की कुछ बिक्री नहीं हुई परन्तु ये अब सारे जापान में आदर से पढ़ी जाती हैं। लेखकों को और अनुवाद करनेवालों को लाभ भी कम नहीं होता। इनके साथ ही साथ ऐसे ग्रन्थों के अनुवाद भी हो रहे हैं जो सर्व साधारण के उपयोगी हैं जैसे स्माइल्स साहेब का "सेल्फ हेल्प" जिससे मनुष्य व्यवसाय, आत्म गौरव, परिश्रम और अन्य गुणों की शिक्षा प्राप्त करता है। इसमें राज ने भी सहायता दी है।

समाचारपत्र।

समाचारपत्रों की उन्नति वर्णन करने के योग्य है। १९ वीं शताब्दी के आरम्भ में केवल एक पत्र था जो गवर्मेण्ट की ओर से छपता था जैसे इस देश में "गज़ेट" है। पर अब ऐसी उन्नति हुई है कि प्रायः प्रत्येक मुख्य नगर से एक दैनिकपत्र निकलता है। और कितने ही साधारण नगरों से एक सप्ताह में दो अथवा तीन, नहीं तो एक तो अवश्य निकलता है। इन में राजधानी के पत्र बहुत प्रसिद्ध हैं। दो एक अङ्गरेज़ी के पत्र भी हैं और इनमें "जापान मेल" सब से प्रतिष्ठित समझा जाता है। जापानी अखबार "निशी निशी शम्बन" अथवा "फ़िजी शम्पु" "होशी शम्बन" "मनेशी शम्बन" इत्यादि हैं इनमें से किसी किसी के सम्पादकों ने लंडन, फ्रान्स आदि नगरों में शिक्षा पाई है और वे प्रत्येक विषय पर गम्भीरता,

सावधानी और युक्ति के साथ लेख लिखते हैं। यदि कोई विख्यात पुरुष जापान जाता है तो बहुधा ऐसा होता है कि किसी मुख्य पत्र की ओर से कोई प्रतिनिधि उसके पास जाकर कुछ प्रश्नों के पूछने की आज्ञा मांगता है। और जिस तरह का वह आदमी हो उसी तरह के प्रश्न उससे पूछे जाते हैं। प्रश्नों के उत्तर वह लिखता चलता है और दूसरे दिन इसका पूरा ब्योरा पत्र में छप जाता है। इन अखबारों की बिक्री भी बहुत है। बाजारों में साफ सुथरे कपड़ों में लपेट कर बहुधा लड़के अखबार बेचते दिखलाई देते हैं। रिकशा चलाने वाले कुली, नौकर चाकर, व्यापारी सब अखबार पढ़ते हैं परन्तु जो अखबार ऐसे लोगों के हाथों में पड़ते हैं वे उस उच्च श्रेणी के नहीं होते कि जिनसे मनुष्य के भाव उच्च हों।

व्यापार।

बिना व्यापार की उन्नति के कोई देश यथार्थ रूप से सभ्य नहीं कहा जा सकता। यदि किसी देश में विद्या की उन्नति हो परन्तु रोज़ काम आने वाली साधारण वस्तुओं के लिये वह विदेशियों पर निर्भर रहे तो उस देश की उन्नति पूर्ण नहीं कही जा सकती। जापान का व्यापार दिन पर दिन उन्नति पर है। जापानी छाते, मोज़े, घड़ियां विदेश में जाकर बिकते हैं। व्यापार की हर एक शाखा में अद्भुत उन्नति हुई है। सबसे पहिली रेल टोकियो से योकोहामा तक अर्थात् १८ मील सरकार की ओर से १८७२ ई० में चलाई गई थी और १८८३ ई० में व्यापारियों ने और ६३ मील तक रेल चलाई। स० १८६६ तक सरकारी रेल ८६३ मील तक चलने लगी और व्यापारियों की ओर से उसी सन् तक २८०२ मील तक। रेल गाड़ियां इङ्गलैंड से मंगाई जाती थीं पर अब जापान

ही में बनती हैं। एनजिन पहिले कभी इङ्गलैंड से और कभी अमेरिका से आते थे पर वे भी अब वहीं बनते हैं। १२००० मील तक पृथ्वी पर और ३६८० मील तक समुद्र में जापानियों की ओर से तार का बन्दोबस्त है। और टेलिफून का भी बहुत प्रचार है। कपड़ा बिनने की कलें, रेशम बनाने की रीति, रुई साफ करने का ढङ्ग इन सब को देख कर अचम्भा होता है कि जो जाति ५० वर्ष पहिले साधारण दस्तकारी के लिये भी मशहूर नहीं थी वह आज पदार्थ विज्ञान के सहारे एशिया भर को मनुष्य जीवन की साधारण से साधारण वस्तु पहुंचाने का दावा करे। कागज़ बनाने की कई कलें हैं जिन में से एक में दिन भर में २३००० पौंड कागज़ बनता है और कागज़ इतना मज़बूत और सुन्दर होता है कि योरोप के लोग भी उसे पसन्द करते हैं। आधुनिक कृषिविद्या के सहारे चावल और गेहूं ऐसा उत्तम पैदा किया जाता है कि इङ्गलैंड और अमेरिका तक में उनकी बिक्री है। जापान के अपने जहाज़ होने के कारण केवल एक वर्ष में सिर्फ फिलिपाइन्स में पांच गुना रोज़गार बढ़ गया है और वहां के लोगों का हौसला है कि रुसी साइबीरिया और आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में वे इतनी सस्ती चीज़ें पहुचाएंगे कि लोग योरोप से भेजी हुई वस्तुओं को न लेंगे। अभी थोड़े ही दिन हुए जब रुस जापान में लड़ाई की बात चीत हो रही थी कि इङ्गलैंड के एक बारुद गोली बन्दूक बनानेवाले ने जिसकी दूकान से जापान को माल जाया करता था समझा कि अब तो बहुत मांग आयगी और उसने लाखों रुपए का माल तय्यार करने का प्रबन्ध किया परन्तु लड़ाई छिड़ भी गई और प्रत्येक दिवस हम लोग इस लड़ाई का हाल पढ़ कर जापान की प्रशंसा करते हैं पर उस दूकानदार से एक पैसे की भी चीज़ नहीं मंगाई गई। इसी तरह से मिस्टर स्टेड से एक

अमेरिकन टोपी बेचने वाले ने बड़ी शिकायत की कि जापानी लोगों से हमारे एजेण्ट परेशान हैं, जिस जिस तरह की टोपी हमलोग बनाकर भेजते हैं वे लोग बिलकुल वैसीही तय्यार करके आधे दाम पर बेचते हैं। बहुत से लोग समझते हैं कि जापानी खाली नक़ल करना जानते हैं। नई बात दर्याफ्त करना उनकी बुद्धि के वाहर है। लेडी ब्रेसी ने एक जगह लिखा है कि किसी योरोपियन ने एक जापानी दर्ज़ी को पाजामा सीने के लिये नमूने का पजामा दिया जिस में एक जगह पैवन्द था। जापानी दर्ज़ी ने जो नया पाजामा सीया तो उसमें भी उसी तरह का पैवन्द लगा दिया। पर अब यह बात सत्य नहीं है। हर साल सैकड़ों नई चीज़ें रजिस्टर कराई जाती हैं। म्युराटा राइफल (बन्दूक) एक जापानी की निकाली हुई है। उसके पीछे और कई राइफल जापानियों ने चलाई। जिस क्विक फायरर की इतनी प्रशंसा आज कल सभ्य जगत में हो रही हैं उसका चलाने वाला एक विलक्षण बुद्धि सम्पन्न जापानी था। टोकियो के एक व्यापारी ने एक प्रकार की फलालैन बनाई है जिसके सामने योरोप की फलालैन फीकी पड़ जाती है। एक वैज्ञानिक ने ऐसा रंग तय्यार किया है कि जिसको जहाज़ की पेंदी में लगा देने से उस में पानी की घास और मोथे नहीं लगने पाते। आश्चर्य नहीं कि इस रंग को दूसरे देश के लोग भी अपने जहाजों में लगाने लगें। सैकड़ों नई बातें जापानियों ने कपड़ा बिनने की कलों में दर्याफ्त की हैं। एक आदमी ने एक छोटी सी कल जिसका दाम १५) रुपया है बनाई है कि जिससे १ मिनट में ४० और साधारणतः दिन भर में १००० चुरुट बनती हैं। इसी तरह से छोटी छोटी सस्ती कलें मोज़ा बुनने और दस्ताने बनाने की भी हैं। नियम यह है कि हर एक नई वस्तु को जिसका पेटेंट कराना हो जिसमें कोई दूसरा उसको न

बेच सके पेटेण्ट आफिस में भेजना पड़ता है। खाने पीने की वस्तुओं, दवा अथवा ऐसी वस्तुओं का जिनके बनाने में, या बनाने पर धर्मनीति का उलंघन और सर्वसाधारण को क्लेश हो ऐसी वस्तुओं का पेटेंट नहीं हो सकता। प्रत्येक वस्तु केवल १५ वर्ष के लिये पेटेंट हो सकती है जिसमें ४ वेर कर के लगभग ५०००) रुपया देना पड़ता है। यदि कोई पुरुष किसी वस्तु को पेटेंट कराने पर न बेचे तो तीन वर्ष पीछे पेटेंट कराना न कराना बराबर हो जाता है, जो चाहे उसको बनाकर बेच सकता है। उसी तरह यदि कोई थोड़े दिन बेचकर तीन वर्ष न बेचे तो उसके साथ भी इसी नियम का पालन हो सकता है। निदान कोई अच्छी बात लोप नहीं होने पाती।

जापान की प्रत्येक व्यापार सम्बन्धी वस्तुओं का उल्लेख वही कर सकता है कि जो एक वेर जापान हो आया हो। सैकड़ों कलें, बङ्क, स्कूल, कालेज़, जहाज़ जापान के गौरव को व्यापारी संसार में बढ़ा रहे हैं और धन्य है वह पुरुष जो इनको अपनी आंखों से देखे और उससे भी अधिक प्रशंसनीय वह पुरुष है कि जो उनको देखकर अपने देश की दशा को सुधारने का यत्न करे। हमारे देश में ऐसेही लोगों की आवश्यकता है। समुद्र-यात्रा के विरुद्ध आन्दोलन तुरन्त कम हो जाय यदि लोग विदेश से ऐसी बातें सीख कर आवें कि जिनसे सर्वसाधारण की आर्थिक अवस्था की उन्नति हो।

सामाजिक अवस्था।

चीनी और हिन्दुओं की तरह जापानी भी बडे शिष्टाचारी हैं। उनके सलाम का तरीका यह है कि दोनों हाथों को घुटनों पर रख कर आगे की ओर झुक जाते हैं। जब इससे अधिक सम्मान करते हैं तो साष्टाङ्ग दंडवत करते हैं। कोई

वस्तु किसी जापानी को दीजिए तो वह उसे तनिक झुक कर स्वीकार करेगा। कोई जापानी बालक अपनी माता को साष्टाङ्ग दंडवत किए बिना और बिना उसकी आज्ञा लिए कभी गृह में प्रवेश नहीं करता और गृह से जाते समय भी ऐसाही करना पड़ता है। मन बहलाव के बहुत से सामान हैं। कहते हैं कि एशिया की जातियों में जापानियों से बढ़कर पुष्पों से प्रेम और कोई नहीं रखता। हर रोज़ संध्या को फूलों का बाज़ार लगता है। जापानी कुश्ती, शतरंज और तास पसन्द करते हैं। कुश्ती लड़ते वक्त जापानी पहलवान भी दांव पेच दिखाते हैं। थियेटर की प्रथा १६ वीं शताब्दी से चली आती है। पहिले धर्मविषयक नाटक हुआ करते थे। थियेटर दिन के समय होते हैं और वहां जाने वाले चावल, रोटी, मिठाई इत्यादि साथ ले जाते हैं। थियेटरों में मर्दही अभिनय करते हैं। स्त्रियों का भाग लड़के लेते है। हिन्दुस्तान की तरह जापान में भी गानेवाली स्त्रियां बहुत हैं। ऐसी स्त्रियों की बड़ी प्रतिष्ठा की जाती है और कभी कभी बड़े बड़े अमीर और प्रतिष्ठित लोग इनसे विवाह करते हैं। पहिले कभी कभी यह ऐसा अश्लील नृत्य करती थीं कि अब सरकार ने उसकी मनाही कर दी है। इनमें से कुछ स्त्रियां अनुचित ढङ्ग से भी रहती हैं और सुशिक्षित जापानी इनको अपने गृहों में नहीं आने देते। पुराने ख्याल के लोग अब तक विवाह इत्यादि पर इनको बुलाकर नाच कराते हैं। गाना बजाना और नृत्य करना बुरी बातें नहीं हैं और शुभ अवसरों पर इनसे आनन्दही प्राप्त होता है परन्तु खेद की बात तो यह है कि ऐसे आनन्द के बढ़ाने वाले गुण आज कल ऐसी स्त्रियों के पास हैं कि जिनकी चाल चलन घृणित है और जिनको अपने पवित्र घर में लाना अत्यन्त हानिकारक है। हमारी स्त्रियां और बहिनें हमारे सामने भजन तक गाने में शरमाती हैं जिसका नतीजा यह होता

है कि नौजवान लोग गाना सुनने के लिये अपना सर्बस नाश कर बैठते हैं। यह बात हमारी समझ में नहीं आती कि हम लोगों का हृदय ऐसी स्त्रियों को मन्दिरों में उत्सवों और अन्य धर्मसम्बन्धी अवसरों पर बुलाने से दुःखित नहीं होता। बड़े हर्ष की बात है कि भारतवर्ष में बहुत से बड़े घरों में अब वेश्याओं के नाच के बदले परोपकारी विषयों पर व्याख्यान अथवा कोई धर्म सम्बन्धी कथा कराई जाने लगी है।

मिकाडो का अधिकार जमने से पहिले यह नियम था कि युद्ध में जब कोई बीर हार जाता और समझता था कि अब शत्रुओं के हाथ में पड़ जाऊँगा तो वह तुरन्त अपना पेट चीर डालता था। प्रत्येक वीर पुरुष अपने साथ एक तलवार रखता था जिससे वह लड़ता था और एक कटार जिससे वह समय पड़ने पर अपना पेट चीर डालता था। इसको "हरा किरी" कहते हैं। यदि कोई सिपाही अथवा उच्च कुल का पुरुष फांसी पाने के योग्य समझा जाता तो वह भी इसी प्रकार से अपने हाथ से अपना पेट चीर डालता था। अपराधी एक चबूतरे पर घुटने के बल उत्तर की ओर मुँह कर के बैठता था, उसके मित्र और गवाह जिन्होंने उसको अपराध करते देखा था एक मण्डल बांध कर उसको घेर लेते थे। अफसर आज्ञानुसार कटार उसको देता था। अपराधी अपनी अन्तिम इच्छा प्रकाश करके कटार अपने पेट में ८ इञ्च तक डाल देता था और उसी समय कोई साथी उसका सिर धड़ से अलग कर देता था। "हरा किरी" करके मरने से यह समझा जाता था कि वह मनुष्य सब पापों से मुक्त होगया और जो ऐसा करने से डर जाता वह कायर और घृणा योग्य समझा जाता था और मरने वाला यदि कटार मारने पर इतना बल और साहस रखता कि तलवार घुमा कर वह अपना सिर भी काट ले और यदि होसके तो अपनी कटार पुनः म्यान में डाल ले तो उसकी बीर-

ता का गौरव कई पीढ़ियों तक बखाना जाता था। ये सब बातें अब उठ गई हैं। पहिले लोग गोदना गोदाते थे। अब यह भी बन्द कर दिया गया है। जापानी दिन में तीन बेर खाते हैं। चावल सब लोगों को अधिक प्रिय है। मंगोलियन जाति के लोगों के समान ये लोग दूध नहीं पीते। दूध सब बच्चों के लिये छोड़ दिया जाता है। समुद्र के प्रायः सभी जन्तुओं को वे भक्ष्य मानते हैं। उनके खाने का ढङ्ग विचित्र है। दहने हाथ की उङ्गलियों में वे दो छोटी लकडियां लेते हैं और रसेदार भोजन छोड़ कर सभी वस्तु इसी से खाते हैं। बरसात में सब खडाऊँ पहनते हैं। पुरुष और स्त्री दोनों एक लम्बा कुरता आगे की तरफ से खुला हुआ पहनते हैं जो कमरबन्द के सहारे शरीर से सटा रहता है। इसकी लम्बी आस्तीन मे थैलियां रहती हैं जो जेब का काम देती हैं। जेब में प्रत्येक मनुष्य कागज़ का रुमाल रखता है। परन्तु अब अङ्गरेजी पोशाक की रिवाज बहुत बढ़ती जाती है।

जब राजा या सरदार मरता था तो उसके साथ उसके जीते घोडे गाड़ दिए जाते थे। फिर जीते घोड़ों के बदले उनकी प्रतिमा गाड़ी जाने लगी। अब यह रसम बिल्कुल उठ गई है।

जापान के बौद्धधर्मावलम्बी किसी जन्तु को नहीं सताते। इस कारण चिडियां इत्यादि आदमियों से इतनी निडर हो गई हैं कि डेसर साहब ने कई बेर तितलियों को आप से आप बच्चों के हाथों पर बैठते देखा है।

जापानियों को सैर तमाशे का बड़ा शौक है। जैसे हिन्दुस्तान में लोग आंवले या कदम तले जाकर एक दिन रहते हैं और वहीं खाते पीते हैं वैसेही जापानी लोग चेरी पेड़ के नीचे जाकर एक दिन रहते और वहीं खाते पीते हैं। बादाम का पेड़ उनको बहुत प्रिय है यहां तक कि यदि किसी स्त्री की

सुन्दरता की प्रशंसा करते हैं तो कहते हैं कि उसकी आंखें बादाम की सी हैं।

विवाह की रीति हिन्दुओं से कुछ कुछ मिलती है। जापानियों का भी यह ख्याल है कि परलोक का सुख लड़के के "श्राद्ध" करने से प्राप्त होता है। इस लिये प्रत्येक मनुष्य को विवाह करना आवश्यक है पर बालविवाह की रीति नहीं है। लड़का कम से कम १६ वर्ष का और लड़की १३ वर्ष की होती है। यद्यपि यह भी बालविवाह है परन्तु जिस अवस्था में किसी किसी जाति में हमारे देश में विवाह होते हैं उनकी अपेक्षा यह अच्छा है। जहां लड़का या लड़की बड़े हुए कि माता पिता विवाह की फ़िक्र करने लगते हैं। भारत की किसी किसी जाति में विवाह की बात चीत पुरोहित या नाई द्वारा होती है पर जापान में किसी सम्बन्धी द्वारा जिससे विशेष हित हो होती है। विवाह की बात चीत हो जाने पर एक दिन नियत होता है कि जब लड़का लड़की को देखने जाता है और उचित समझे तो बात चीत भी कर सकता है। जब दोनों एक दूसरे को पसन्द कर लेते हैं तो भेंट भेजी जाती है। इसके अनन्तर फिर विवाह नहीं टल सकता। शुभ दिन नियत होता है। सफेद कपड़ा शोक का चिन्ह है। विवाह के दिन लड़की सफेद वस्त्र पहनती है जिसका तात्पर्य यह है कि अब वह सदा के लिये अपने घर से चली जायगी (मानो मर जायगी)। विवाह कराने वाला और उसकी स्त्री लड़की को लड़के के घर पर रात के समय ले जाते हैं। उसके पिता के घर से जाने पर घर साफ किया जाता है जैसा कि किसी मुर्दे के लेजाने पर होता है पर लड़केवाले के घर पर ज्योनार (दावत) होती है। दुलहा और दुलहिन को तीन प्यालों में से मदिरा प्रत्येक को तीन बेर अर्थात् कुल ९ बेर होठों से लगानी पड़ती है। तब लड़का रंगे हुए कपड़े पहिनता है और लड़की भी कपड़ा बदल देती है। जब

ज्योनार होजाती है तो लड़का लड़की विवाह के स्थान पर जाते हैं और फिर ९ बेर प्याला मुंह से लगाकर प्रतिज्ञा करते हैं । ज्योनार में पहिले लड़की प्याला मुंह से लगाती है क्योंकि वह उस समय तक अतिथि समझी जाती है पर विवाह के स्थान में पहिले लड़का मुंह से प्याला लगाता है क्योंकि अब वह लड़की का पूर्ण अधिकारी हो जाता है। विवाह का समाचार सरकार को दिया जाता है। जिसको पुत्र नहीं होता वह जामाता को गोद लेसकता है। ऐसी अवस्था में जामाता अपने नाम में अपनी स्त्री का नाम सम्मिलित करलेता है। मरद को अपनी स्त्री के छोड़ने अर्थात् तिलाक देने का अधिकार है। तिलाक देने की रीति नीच लोगो में बहुत है। सं० १८७१ से यह नियम होगया है कि तिलाक दिए जाने पर स्त्री को अधिकार है कि वह मुकद्दमा लड़े। विवाह में अब जाति का विचार भी नहीं है। पर्दा तो पहिले भी नहीं था पर अब बड़े बड़े अफसरों की स्त्रियां सभाओं में आती हैं। स्त्रियां अपने लड़कों को गोद नहीं लेतीं, अपनी पीठ पर एक कपड़े से जो कन्धे पर से लटका रहता है बांधे रहती हैं। यह कपड़ा लड़के की पीठ और जांघ को ढँक देता है।

जापान में मुर्दे गाड़े जाते हैं। मरने के २४ घंटे तक सफेद लकड़ी के एक सन्दूक में शव रक्खा रहता है। इस सन्दूक में एक तकिया रहती है जिसमें चाह की पत्तियां भरी रहती हैं। क़बर पर मृतक का नाम और मरने का दिन खोदा जाता है और एक काठ के टुकड़े पर भी यही लिख कर गृहदेव की वेदी पर रख दिया जाता है। बौद्धधर्म के फैलने पर लोगों ने मुर्दा जलाना आरम्भ किया था। धीरे धीरे उच्चकुल के लोगों ने भी जलाना आरम्भ किया। सन १६५४ से राजा ने फिर गाड़ने की प्रथा जारी की।

चीनियों और हिन्दुओं की तरह जापानी लोग नियमित

दिनों तक सम्बन्धियों के मरने पर शोक मनाते हैं। दादा के मरने पर १५० दिन तक सफेद कपड़ा पहनते हैं और ६० दिन तक मांस नहीं खाते। माता पिता तथा पति के मरने पर १३ महीना सफेद कपड़ा पहिना जाता है और ५० दिन मांस का खाना बन्द रहता है। स्त्री भाई बहिन और सब से बड़े लड़के के मरने पर ९० दिन तक सफेद कपड़ा पहनते और २० दिन मांस नहीं खाते तथा अन्य पुत्रों के मरने पर ३० दिन तक सफेद कपड़ा पहनते और १० दिन मांस नहीं खाते।

इसके व्यतिरिक्त ७वे, १४वें, २१वें, ३०वें, ४९वें, और १००वें दिन कबर पर जाते हैं। वर्षवें दिन रात को चमकीले रंगों की काग़ज़ की लालटैनें कब्र पर बालते हैं। दूसरी और तीसरी रात को आस पास की सब कबरें प्रज्वलित की जाती हैं और शराब उड़ाई जाती है। तीसरे दिन प्रातः काल दो बजे पितृविसर्जन होता है। हिन्दुओं में किसी किसी जाति में स्त्रियां पूरी और दीया अपने घर और गली के बाहर रख आती हैं और जमीन पर पानी गिरा कर पित्रों को विदा करती हैं पर जापानी नागासाकी में पहाड़ी पर से बहुत सी काग़ज़ की लालटैनें नीचे उड़ा देते हैं और यह समझते हैं कि पितृ लोग प्रातः काल होते होते चलदेंगे। नीचे घास फूस के जहाज़ बनाए जाते हैं। इनमें फल और कुछ द्रव्य रख दिया जाता है। इसमें लालटैने खोंस देते हैं। हवा में जहाज़ इधर से उधर जाते हैं और थोड़ी देर में उन में आग लग जाती है। जहाज़ के जलतेही वे लोग कहते हैं कि बस पितृ लोग संसार से पुनः विदा हुए। एक अङ्गरेज़ ने लिखा है कि ज़ापानी अब तक यंत्र मंत्र मानते हैं और स्त्रियां लड़का होने या उस के जीता रहने के लिये पुजारियों से सलाह लेती हैं परन्तु इन सब विचारों में आश्चर्य का परिवर्तन हो रहा है और थोड़े दिनों में शायद ये सब ऐतिहासिक बातें होजांय

क्योंकि शिक्षित लोग इन बातों पर अब विश्वास नहीं करते। भारत में ऐसा होने में अभी बहुत विलम्ब है क्योंकि कुछ सभा-सोसायटियां यहां ऐसी खुल गई हैं कि जो भूत सिद्धी इत्यादि को विज्ञान शास्त्र के गूढ़ और अमूल्य सिद्धान्तों का परिणाम समझाने का यत्न कर रही हैं। आश्चर्य इतनाही है कि इनमें से किसी किसी के कार्यकर्त्ता योरोपियन हैं कि जिनके वाक्य स्वभावतः ब्रह्मवाक्य समझे जाते हैं।

जापान के उद्धार करनेवाले।

जापान ऐसे शीघ्रगामी देश में मुख्य मुख्य नायकों और देश हितैषी पुरुषों का वर्णन करने के लिये एक पूरी पुस्तक लिखी जा सकती है। इसमें केवल उन लोगों का वर्णन किया जायगा कि जिन्होंने जापान के पुनरोंद्धार में सहायता की थी। इनके पीछे भी ऐसे गम्भीर राजनीतिज्ञ पराक्रमी योद्धा दूरदर्शी बुद्धिमान हुए हैं कि जिनकी कथा सुन कर अवतार याद आते हैं। जापान के वर्तमान इतिहास में सब से पहिली मूर्त्ति जिसका उन्नत और शुद्ध हृदय हमको साष्टाङ्ग दंडवत करने पर वाध्य करता है वह वहां के सम्राट मिकाड़ो मत्सहितो हैं। इस पुस्तक में लिखा जा चुका है कि क्योंकर यह पर्दे से वाहर पहिले पहिल लाए गए, कैसे इन्होंने शिक्षित और देशहितैषी जापानियों की सहायता की, प्रान्तिक और प्रतिनिधि सभाएं स्थापित कीं। जापान की उन्नति का एक अंश भी ऐसा नहीं है कि जिसमें वर्तमान मिकाडो का हाथ न लगा हो। विद्या, व्यापार, अर्थ और शासन की वृद्धि के जितने उपाय सोचे गए सब में सम्राट ने तन, मन, और धन से सहायता की। जब नवीन शिक्षा प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ तो एक मनोहर वक्तृता में आपने कहा कि मेरी इच्छा

है कि जापान मात्र में कोई कुटुम्ब ऐसा न हो कि जिसका प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित न हो और एक ग्राम भी ऐसा न हो कि जिसका कोई कुटुम्ब शिक्षा से विहीन हो। इन वाक्यों को उत्सवों पर लड़के पढ़ते और आनन्द मनाते हैं। इनका जन्म ३री नवम्बर स० १८५२ को हुआ था। १३वीं फर्वरी सं०१८६७ को ये सिंहासन पर बैठे जब कि इन की अवस्था १५वर्ष की थी। इस समय यह संसार के विख्यात सम्राटों में गिने जाते हैं। यह जैसे ही स्वयं विशाल बुद्धि सम्पन्न, सर्वप्रिय और गम्भीर हैं वैसी ही उदार, सुशील और विदुषी स्त्री से इनका विवाह हुआ है। जापान की समराज्ञी जापानी स्त्रियों की उन्नति में सर्वदा सहायता देती रहती हैं।

मार्किस हिरोबुमी ईटो।

एक विख्यात जापानी का कथन है कि यदि किसी व्यक्ति विशेष में जापान का वर्तमान और भविष्यत विद्यमान समझा जासकता है तो वह मारक्विस ईटो हैं। इनका जन्म सितम्बर १८४१ में हुआ था। जब इनकी उम्र २२ वर्ष की थी अर्थात् १८६३ में यह खलासी का काम करते हुए इङ्गलैंड पहुंचे उस वक्त इनके साथ कौंट इनोयी भी थे। वहां इन्होंने पश्चमी राजनीति का भली भांति ज्ञान प्राप्त किया और जापान लौट कर देश की सेवा में ये प्रवृत हुए, स०१८६८ में यह हयुगो के गवर्नर नियत हुए और विदेशी गवर्मेण्ट के प्रतिनिधियों से जिस प्रकार यह राज्य सम्बन्धी बातों को तय करते थे वैसे जापान में कोई नहीं कर सकता था। स० १८७० में यह अमेरिका अर्थशास्त्र की शिक्षा प्राप्त करने गए और १ वर्ष तक वहां रहे। स० १८७३ में मंत्रियों की सभा (कैबिनेट) के सभासद हुए। स० १८८५ में यह मुख्य राज्य मंत्री नियत हुए

और तीन वर्ष इसी पद पर रहे। मिकाडो के आग्रह करने पर फिर इन्होंने इसी पद को स्वीकार किया और इसी प्रकार से स० १९०० तक समय समय पर ये चार बेर राजमंत्री हुए। प्रीवी कौन्सल, हौस आफ पीअर्स इत्यादि के प्रेसिडेंट भी बहुत दिनों तक रहे। जब कभी किसी राज सम्बन्धी कार्य के लिये विदेश जाने की आवश्यकता हुई तो यही उन देशों को भेजे गए। स० १८७१ में युवराज के साथ योरोप और अमेरिका गए और फिर स० १८८२ में जापान की राज्य प्रणाली सुधारने के उद्देश्य से इन्हीं देशों में जाकर उसके भविष्यत रूप और नियम निश्चय किए और जापान में आकर उन्हीं को जारी किया। यह काम इनका जापान में सर्वदा स्मरण रहेगा। इसी समय में यह रूस के ज़ार के राज सिंहासन पर बैठने के समय में रूस में गए थे। सन् १८८५ में कोरियन लोगों का झगड़ा निपटाने के लिये यह चीन देश गए। श्री महारानी विक्टोरिया के जुब्ली के समय में (सन् १८९७) यह युवराज को लेकर लंडन पधारे थे। तीन वर्ष के लगभग हुए कि एक बेर यह पुनः योरोप इत्यादि देशों में गए थे जब कि इन्होंने इङ्गलैंड और जापान के सन्धि के नियम निश्चय कराए थे। इस बेर रूस, जर्मनी, और इङ्गलैंड में इनका बड़ा आदर हुआ था। हमारे श्रीमान एडवर्ड ने इनसे भेंट की और इनको G. C. B. की उपाधि प्रदान की। मार्किस ईटो की बुद्धि का परिचय सब से पहिले चीन और जापान की लड़ाई के समय सन् १८९५ और ९६ में हुआ। उस समय से दुःख के समय में जापान के सब लोगों की निगाह इन्हीं की ओर रहती है और मिकाडो भी जापान मात्र में जितना आदर इनका करते हैं और किसी का नहीं। सन् १९०१ में एक जापानी राजनीतिज्ञ मिस्टर होशी को किसी दुष्ट ने बध किया था उसके मृतक संस्कार पर मिस्टर इटो भी गए थे और

वहां से सीधे मिकाडो से मिलने चले गए। इसपर अखवार वालों ने बड़ा शोर मचाया कि मि० ईटो ने राजा का निरादर किया। राजा के सम्मुख जापान के बड़े से बड़े लोग कांपते हुए और नवीन वस्त्र पहन कर जाते हैं परन्तु मिकाडो ने इस का कुछ विचार नहीं किया और यह समझ कर कि जापान की राजनैतिक उन्नति के एक मात्र कारण ईटो ही हैं इनको एक ऐसी उपाधि दी कि जो केवल राज घराने के लोगों को मिलती है। लोगों को आश्चर्य होगा कि ऐसा विलक्षण जापानी नेता और नायक रहन सहन में एक सादा साधारण पुरुष है। टोकियो के निकट ओइसो स्थान में एक एकान्त गृह में यह रहते हैं। यद्यपि उनके वाल सफेद हो चले हैं परन्तु अब तक उनके शरीर में इतनी फुरती है कि वह हमेशा कुछ न कुछ कियाही करते हैं। अखबार और कितावें पढ़ने का इन को अब तक बड़ा शौक है। योरोप के प्रायः सभी प्रसिद्ध पत्र इनके पास आते हैं। जब कभी आवश्यकता होती है तो कैबिनेट और पार्लियामेण्ट के सभासदों के दल के दल इनके यहां सलाह लेने के लिये पहुंचते हैं। योरोप और अमेरिका से बहुत दर्शक इन के यहां जाया करते हैं। इनके घर में एक भी आराम कुरसी नहीं है। यह हमेशा योरोपियन पोशाक परन्तु बहुत सादी पहिनते हैं और अङ्गरेज़ी, जर्मन, फ्रेन्च इत्यादि भाषा में इतिहास और राजनीति का कोई ऐसा ग्रन्थ नहीं है कि जो इनके पास न हो अथवा जिसको इन्होंने न पढ़ा हो। इतने पर भी इनको घमंड छू तक नहीं गया है। इन्होंने जापान की अधम से अधम अवस्था अपनी आंखों से देखी है और इस समय अपने ही बुद्धि और बाहु बल से जापान को उन्नति के शिखर पर चढ़ा दिया है पर तिस पर भी कभी किसी ने भी इनके मुंह से यह कहते नहीं सुना कि मैं ने यह किया है। यह जापान की वर्तमान धार्मिक अवस्था को बहुत बुरा समझते हैं। इनकी

इच्छा यह है कि "बुशिदो" अर्थात् धर्म के सर्वदेशी और अटल सिद्धान्तों को ही मानना चाहिए। यह ईसाई धर्म को अच्छा नहीं समझते। इनके ऊपर कई बेर दुष्टों ने गोली चलाई हैं पर हर दफे यह बच गए।

कौण्ट इनोयी।

यह उन ६ आदमियों में से हैं जो पुर्नोद्धार के पूर्व खलासी बन कर योरोप के देशों में गए थे, जिनमें से एक ईटो भी थे। वहां से आने पर यह भी बड़े बड़े पदों पर रहे और मिकाड़ो की विशेष कृपा के पात्र हुए। अर्थविभाग का समझनेवाला इन सा अच्छा जापान भर में दूसरा नहीं समझा जाता। यह प्रधानराजमंत्री भी रह चुके हैं। इनका जीवन भी सादा है। इनको भिन्न भिन्न प्रकार के पत्थरों, तथा तस्वीरों के एकत्र करने का ऐसा शौक है कि छोटी छोटी अद्भुत वस्तुओं के लिये कई हज़ार रुपए दे देते हैं। यह भी जर्मनी, फ्रांस, लंडन इत्यादि स्थानों में कई बेर हो आए हैं और रात दिन यही सोचा करते हैं कि जापान की उन्नति किस प्रकार हो।

कौएट ओकयुमा।

यह भी मुख्य राजमंत्री और अर्थविभाभ के मंत्री रहचुके हैं। इनसे ओजस्विनी और मनोहर वक्तृता जापान में कोई दूसरा नहीं देसकता। इनके राजनैतिक विचार बहुत ही प्रवल और बढ़े हुए हैं। इसी कारण इनसे कुछ लोग अप्रसन्न रहा करते हैं। यह सारे जापान में विद्या सम्बन्धी विषयों पर व्याख्यान देते फिरते हैं। यद्यपि अंगरेजी जानने पर यह अंगरेजी में भाषन नहीं करते परन्तु यह योरोपियन

लोगों और उनकी सभ्यता के ऐसे भक्त हैं कि बहुत से लोग इनका यथार्थ तात्पर्य न समझ कर उलटा अर्थ लगा लेते हैं। एक वेर एक दुष्ट ने यह समझकर कि यह जापान में विदेशियों का राज पसन्द करते हैं डाएनामाइट चलाया और इनके घोड़ों और गाड़ीवान को मार डाला। इनकी जान तो बचगई परन्तु इनके पैर में ऐसी चोट आई कि ये हमेशा के लिये लंगड़े होगए। लंगड़े होने पर भी यह लकड़ी के सहारे चल फिर कर लेक्चर देते हैं। इनके स्थापित किए हुए दो कालेज हमेशा इनके स्मारक रहेंगे। एक तो स्त्रियों को उच्चशिक्षा देने के लिये और दूसरा बालकों को जापानी भाषा के द्वारा शिक्षा देने के लिये। पहिले लिखा जा चुका है कि भिन्न भिन्न कालेजों में एकही विषय पर भिन्न भिन्न भाषाओं में शिक्षा दी जाती है। इसको देख कर कौण्ट ओक्युमा ने सेन्मनगोको नाम का कालेज खोला कि जिसमें प्रत्येक विषय की पढ़ाई जापानी ही में होती है। इसके साथ ही जापानी भाषा में ग्रन्थ छपवाने का भी इन्होंने स्वयं अपने व्यय से प्रबन्ध कर दिया है। शिक्षा से इनको इतना अनुराग है कि अपना निवास-स्थान भी इन्होंने इस कालेज के निकट रक्खा है। एक बेर इस घर को भी लोगों ने फूक दिया था परन्तु उसी स्थान पर इन्होंने दूसरा बनवा लिया और अपना तन मन, धन अपने देश के अर्पण कर रक्खा है।

व्यारन शिबुसावा।

यह जापान के एक विचित्र पुरुष हैं। पुनोद्धार के पूर्व ये भी शोगन के साथ फ्रान्स और जर्मनी हो आए हैं। किसी समय में यह अर्थविभाग के उपमंत्री थे परन्तु जापान की व्यापार वृद्धि में इन्होंने अपना जीवन लगा दिया और सरकारी नोकरी छोड़ दी। इनके जीवन का इतिहास जापान की

व्यापार वृद्धि का इतिहास है। इस समय जापान में कोई कम्पनी का रोजगार नहीं कि जिसमें इनका शेअर (हिस्सा) न हो। लगभग ५० बड़ी बड़ी कम्पनियों के यह डाइरेक्टर हैं। रहने का ढङ्ग इनका सादा है। कई बेर इनको मंत्री का पद प्रदान किया गया परन्तु इन्होंने स्वीकार नहीं किया। इन्होंने अपना सारा धन अपने देश के अर्पण कर रक्खा है। कितनेही अनाथालय और स्कूल केवल इन्हीं के धन से चल रहे हैं। जापान में जाइण्ट स्टाक कम्पनी अर्थात् कई आदमियों के मिल कर व्यापार करने की प्रथा इन्हीं की जारी की हुई है। इनका हृदय बड़ा उन्नत है और जिस बात को यह अच्छा समझते हैं उसे निडर होकर करते हैं और तिसपर भी सर्वप्रिय हैं। जब यह योरोप गए थे तो प्रचीन रीति के अनुसार दो तलवारें बांधते थे परन्तु जब योरोप के देशों को विद्रोह से शांत पाया तो तुरन्त तलवारें बांधना छोड़ दिया। कहते हैं कि फ्रान्स से इन्होंने अपनी एक तस्वीर जापान को भेजी जिसमें तलवारें नहीं थीं। इसपर इनके घर के लोग इनकी मूर्ति को देख कर रोए थे कि यह योरोप जाकर बिगड़ गए। टोकियो में एक अनाथालय है। किसी समय में यह सरकारी अनाथालय था जिसका प्रबन्ध एक कमेटी करती थी और उस कमेटी के सभापति ब्यारन महोदय थे। स० १८८१ में कुछ लोगों ने यह नियम बनाना चाहा कि सरकार की ओर से कोई अनाथालय न रहे क्योंकि इससे लोग सुस्त और निकम्मे हो जाते हैं। बैरन शिबुसावा ने इस प्रस्ताव का घोर बिरोध किया और कहा कि यह सम्भव नहीं कि इतने बड़े जनसमूह में एक पुरुष भी निसहाय अनाथ न हो। उस वर्ष तो यह नियम न बना परन्तु दूसरे वर्ष अर्थात् सं० १८८२ में यह बिल (नियम) पास होगया और सरकार को अपना अनाथालय बन्द करना पड़ा पर उदार बैरन से यह न देखा गया

उन्होंने उस अनाथालय का स्थान बदल कर उसके व्यय का सारा भार अपने सिर ले लिया। कुछ थोड़ी सहायता अन्य लोगों ने दी परन्तु इस समय इस अनाथालय की स्थिति बैरन महोदय ही के धन और व्यवसाय से है। उनकी धर्म-पत्नी बैरोनेस शिबुसावा के प्रबन्ध से जापानी स्त्रियों ने बहुत सा धन एकत्र किया और कमेटी बनाई जिसका नाम Ladies' charity association रक्खा। मिकाडो की रानी भी इस अनाथालय पर विशेष कृपा रखती हैं और धन द्वारा बराबर सहायता करती रहती हैं। सं० १६०० से इस अनाथालय में एक स्कूल भी खोला गया जिसमें अनाथ बालकों को धर्म और शिल्प की शिक्षा मिलती है। बैरन महोदय इस समय टोकियो चेम्बर आफ कामर्स के सभापति हैं और अखबार के पढ़नेवाले लोग याद करेंगे कि जापान की ओर से जो अभी इस विषय का एक पत्र छपा है कि रूस-जापान की लड़ाई से जापान की शांति में कुछ विघ्न नहीं पड़ा है और जापान जाने वालों को किसी तरह का भय नहीं है उस पत्र पर सब से पहिला हस्ताक्षर बैरन महोदय ही का है॥

कौण्ट मुत्सुकाता।

इसी श्रेणी के ये भी जापानी देशहितैषी हैं। ये भी कई वर्ष तक अर्थविभाग के मंत्री थे। इन्होंने अर्थ-सम्बन्धी ज्ञान बहुत काल तक फ़्रान्स में रह कर प्राप्त किया। जब फ़्रान्स से लौट कर आए तो जापान के शासन में सहायता देना आरम्भ किया। जापान में नोट और सोने के सिक्के का प्रचार इन्हीं के समय में हुआ। सैकड़ों वर्ष से जापान की आर्थिक अवस्था बड़ी शोचनीय हो गई थी यहां तक कि शासक लोगों को यह भी मालूम न था कि कोश में कितना धन है और किस किस प्रकार और किस किस समय कोश से धन निकाला

जाता है। इस अवस्था को देख कर कौण्ट इनोई औरओक्यू-मा ऐसे बुद्धिमानों की बुद्धि चकित थी और इसके सुधार का कोई उपाय नहीं सूझता था पर कौण्ट मुत्सुकाता ने अर्थ विभाग के मंत्री होने पर सारा हिसाब साफ कर दिया और सं० १६०० में अपने पद को त्याग दिया। इसके पीछे जब जब आवश्यकता पड़ी विशेष कर लड़ाई के समय बड़े बड़े लोग इनके पास जाते रहे और इनकी सलाह लेकर सब काम होता था। ये भी ओइसो में एकान्त स्थान में रहते हैं और अपने जीवन को बड़े उत्तम रूप से बिताते हैं।

मारक्विस यामागाटा।

जापान की सैनिक उन्नति के एक मात्र कारण मारक्विस यामागाटा हैं। बहुत से लोग समझते हैं कि वर्तमान काल का जापान यामागाटा ही के विशेष परिश्रम का फल है। किसी किसी का मत है कि जापान में इनसे बढ़कर दूसरा नायक नहीं हुआ। Conscription अर्थात् प्रत्येक जापानी के सेना में भरती होने की प्रथा इन्हींकी चलाई हुई है और जितने भयंकर विरोध का सामना इस कारण से इनको करना पड़ा है दूसरा नहीं कर सकता था। समुराई जाति (क्षत्री) के लोगों ने इस बात पर विद्रोह किया कि हम लोगों के साथ कृषक, व्यापारी और कुली लोग भी रणक्षेत्र में लड़ेंगे। इन लोगों ने कहा कि ऐसा होने से उनका गौरव जाता रहेगा। पर मारक्विस ने एक की भी न सुनी। जब सं० १८७७ में जापान के दक्खिनी भाग में बलवा हुआ और पीछे जब चीन से लड़ाई हुई तो प्रजा से बनी हुई सेना बहुत काम आई। पहिले समय की सेना धन के लालच में लड़ती थी पर ये लोग देशहितैषिता के उच्च भावों को हृदय में रख कर शत्रुओं का सामना करते थे और प्रायः सब जगह जीतते थे। यह देख कर

यामागाटा का विरोध करने के बदले लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। ये भी रूस इत्यादि देशों में हो आए हैं और विशेष कर चीन देश के सम्बन्ध में इनके बराबर किसी दूसरे को विज्ञता प्राप्त नहीं है। ये कई बेर महाराजमंत्री रह चुके हैं। राजा और प्रजा दोनों इनका आदर करते हैं और सैनिक सुधार जितना इन्होंने अपने समय में किया है उससे एक इंच भी उनके उत्तराधिकारियों की आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं पड़ती। इनकी अवस्था लग भग ७० वर्ष की है परन्तु अब तक ये बड़े उत्साही और परिश्रमी हैं। ये अपना कपड़ा इत्यादि बड़ा साफ रखते हैं और इस बात में ज़रा सी भी भूल होने पर लोगों से भी कह बैठते हैं कि अपनी चाल ढाल, वस्त्र, पहरावा, साफ और सुथरा रखना चाहिए।

जापानियों की देशहितैषिता।

भिन्न भिन्न देशों की अवस्था भी भिन्न भिन्न होती है। किसी किसी देश में एक दो असाधारण बुद्धि के देशहितैषी हो जाया करते हैं जिनका प्रभाव सर्वसाधारण पर बहुत देर में और बहुत थोड़ा पड़ता है परन्तु धन्य है वह देश कि जहां के धनाढ्य और दरिद्री, बुड्ढे और बच्चे अपने प्यारे देश के हित तन मन धन देने को तय्यार हों। जापान में देशहितैषिता का बीज उन महानुभावों ने बोया कि जिनका वर्णन गत प्रकरण में किया जा चुका है। इन लोगों की आंखें विदेशियों की धमकियां सुन कर खुलीं जिस पर इन्होंने योरप के मुख्य मुख्य स्थानों में भ्रमण किया और इन देशों की सभ्यता और उन्नति देख कर इनके जी में आई कि पश्चिमी सभ्यता के गुणों को ग्रहण करें। किसी ने फ्रान्स में फौजी शिक्षा पानी आरम्भ की और कोई इङ्गलैंड में जहाज़ बनाना सीखने लगा और वहां से लौट कर राजा और प्रजा

पर अपने उच्च और उन्नत भावों को प्रकाश करने लगा। जापान के सर्व साधारण लोग विदेशियों को "म्लेच्छ" समझते थे और न उनका जापान आना पसन्द करते थे, न किसी जापानी का विदेश जाना ही उनको अच्छा लगता था। ऐसी अवस्था में हम इस बात का अनुभव कर सकते हैं कि इन नवयुवक सुशिक्षित देशहितैषियों को कितनी कठिनाइयां सहनी पड़ी होंगी। इनमें से कई एक मारे गए। बहुतों पर गोलियां चलाई गईं। परन्तु इनमें से किसी का उत्साह हत नहीं हुआ। काण्ट ओक्यूमा लंगडे कर दिए गए परन्तु उन्होंने लकड़ी के सहारे गांव गांव में अपने सद्भावों का प्रचार आरम्भ कर दिया। एक सच्चा देशहितैषी विरोध का सामना करता हुआ और भी दृढ़ हो जाता है। वह समझता है कि जिस जाति के लोग एक अच्छे काम का विरोध करते हैं उनमें अधिक बल, अधिक परिश्रम और अधिक व्यवसाय के साथ काम करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार की देशहितैषिता की लहर जापान में बहने लगी जिसका प्रभाव राजा के महल तक पहुँचा। कहा जाता है कि बिना बलिदान के कोई काम नहीं होता। जापान के उन्नति का इतिहास ऐसी कथाओं से भरा हुआ है कि जिनमें लोग आत्मसमर्पण करने से कभी पीछे नहीं हटे। मिकाडो का राज प्रबल करने के हेतु शोगन का अपने पद को त्याग देना, जमीन्दारों का अपने अपने प्राचीन राजकीय स्वत्वों को छोड़ देना, ये दोनों ऐसी घटनाएं हैं कि जिनकी नज़ीर इतिहास में नहीं मिलती। जापान-निवासी प्राचीन काल से राज्य-भक्त चले आते हैं। जब राजा को उत्साहित और सुधारक पाया तो लोगों का विरोध बहुत ही कम हो गया। विद्या फैलाने का उचित प्रबन्ध करने से लोग भी सब प्रकार के सुधार के लिये तय्यार हो गए। लोग स्वयं समझने के योग्य हो

हुए कि उनकी भलाई किस प्रकार हो सकती है। गाँव गाँव स्कूल खोले गए। यदि जापानी भाषा में किसी विषय की पुस्तकें न मिलीं तो योरोपियन भाषाओं में शिक्षा प्रदान की जाने लगी। सैंकड़ों विद्यार्थी हर वर्ष जर्मनी, फ्रान्स इत्यादि देशों में भेजे जाने लगे जिन्होंने इन देशों में शिक्षा लाभ कर योरोपियन लोगों के हाथों से काम लेकर स्वयं करना शुरू किया, यहाँ तक कि ५० वर्ष के अन्दर योरोपियन लोगों की संख्या बहुत न्यून हो गई और कोई विभाग भी ऐसा नहीं रहा कि जिसमें अधिकांश काम करने वाले योरोपियन हों। जब सब काम योरोपियन लोगों से ले लिया गया और जापानी सब प्रकार की शिक्षा पाकर तय्यार हुए तो आज कल यह प्रश्न उठा हुआ है कि किस भाषा के अक्षरों का प्रयोग होना चाहिए। प्राचीन काल से चीनी अक्षर लिखे जारहे हैं। देशहितैषी जापानी अपनी भाषा की पूर्ण उन्नति करना चाहते हैं और इसी अभिप्राय से एक सभा स्थापित की गई हैं कि जिसका नाम "काना सोसाइटी है। "काना" जापानी अक्षरों को कहते हैं परन्तु इस के विपरीत कुछ लोगों की यह सम्मति है कि चीनी अक्षरों का प्रयोग हो और न जापानी का। इनके बदले रोमन चलाई जाय। केवल भाषा की उन्नति हो, अक्षर वे ही रक्खे जांय जिन्हें विदेशी भी पढ़ लें। दूसरे मत का विशेषतः देशहितैषी जापानी विरोध ही करते हैं।

इसी प्रकार जिस ओर निहारिये प्रायः हर एक उपयोगी विषय पर सभा सोसायटियां जारी हैं या खोली जा रही हैं। लोगों में उत्साह भरा हुआ है जिसको देख कर राजा और अन्य पदाधिकारी प्रसन्न होते हैं और सहायता करते हैं। हमारे देश में इस का उलटा ही है। दो तीन वर्ष हुए कि राज, मजदूरों ने टोकियो में एक बड़ी पंचायत करने की आज्ञा मांगी। पुलिस की ओर से यह प्रबन्ध हुआ कि इस पंचायत
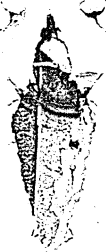
में ५००० आदमी से अधिक न जमा हों । परन्तु पंचायत के समय ३०,००० आदमी जमा थे और उन सब लोगों ने मिलकर व्याख्यान सुने और निश्चय किया कि सरकार से प्रार्थना की जाय कि राजमज़दूरों के उपकार के लिये उचित नियम बनाए जांय, उनकी स्त्रियां और बच्चों के पालन पोषण और विशेष कर काम काज की शिक्षा का सुन्दर प्रबन्ध किया जाय और उनको अधिकार दिया जाय कि वे भी पारलियामेण्ट के सभासदों के चुनाव में वोट (सम्मति) दिया करें जिस में उनकी सब प्रकार से रक्षा होती चले । इसके साथही इन लोगों ने यह निश्चय किया कि ऐसा समारोह प्रति वर्ष ३री एप्रिल को हुआ करे । सरकार और पुलिस की ओर से इन लोगों को कोई कष्ट नहीं दिया गया वरंच इनकी प्रार्थना पर विचार किए जाने की प्रतिज्ञा की गई ।

लोहार बढ़ई इत्यादि लोगों में भी एकता बढ़ती जाती है । आरे से लकड़ी चीरनेवालों ने टोकियो में एक पंचायत बना रक्खी है । जो आदमी टोकियो में राजगीरी करना चाहे उसे दो तीन बर्ष तक काम सीखना पड़ता है चाहे वह दूसरे किसी नगर से यह रोज़गार सीख भी आया हो । इस पंचायत का प्रत्येक सभासद ५ पेन्स वार्षिक देता है । जो इसका सभासद होजाता है उसकी सहायता करना पंचायत का कर्तव्य है । मालिक किसी आरा चलानेवाले को बिना उसकी सम्मति लिए निकाल नहीं सकता और न अधिक आदमी बिना उसकी सलाह के रख सकता है । इसी तरह से लोहारों की एक पंचायत है । इसके नायक इस समय मिस्टर कात्यामा हैं कि जो दस वर्ष तक अमेरिका में रह चुके हैं और अयोवा स्टेट युनिवर्सिटी के एम-ए हैं । रेल के इनजीनियर लोगों की भी एक यूनियन है । थोड़ा समय बीता होगा कि रेलवे कम्पनी इनजीनियर लोगों को तंग किया करती थी । इस पर सब लोगों

ने मिलकर पंचायत की और काम करना छोड़ दिया। कम्पनी ने लाचार होकर उन लोगों ने जो जो कहा करना स्वीकार किया। तभी से इनजीनियरों की पंचायत बड़े जोर पर है जिस में लगभग ८०० इन्जिन ड्राइवर भी सभासद हैं। हर एक सभासद हर महीने अपनी एक दिन की तन्ख्वाह इसमें चन्दा देता है। इस चन्दे से सभासदों की बीमारी के समय में सहायता की जाती है। इसमें कई हज़ार रुपया इस हेतु अलग जमा होता जाता है कि यदि कभी कम्पनी फ़िर तंग करे और इस बात की अवश्यकता हो कि सब लोग काम बन्द करदें तो इस धन से सहायता की जाय। परन्तु कम्पनी इस समय किसी इनजीनियर को बिना पंचायत की सिफारिश के नियत नहीं करती और जो पंचायत से निकाला जाय उस को कम्पनी को भी निकालना पड़ता है। रेशम और कपड़ा बिनने के कारखानों में लड़कियां काम करती हैं जिनके पढ़ाने, लिखाने, खिलानें और रहने का बन्दोबस्त मालिक को करना पड़ता है। यद्यपि सुधार की अब तक आवश्यता है परन्तु मालिक लोगों का बर्ताव अपने नौकरों से पिता पुत्र का सा है।

जो लोग समाचारपत्रों को बराबर पढ़ते हैं उन्होंने जापानियों की देशहितैषिता की बहुत सी कहानियां पढ़ी होंगी। इस पुस्तक में सब कहानियों का लिखना असम्भव है। यदि एक पुस्तक केवल इन कहानियों को संग्रह करके रची जाय तो वह बहुत से उपन्यासों से अधिक उपयोगी होगी और उस अङ्गरेज़ी कहावत की सत्यता को सिद्ध करेगी कि झूट से सत्य अधिक रोचक है।

एक देशहितैषी माता।

टोकियो के निकट एक गांव में एक स्त्री रहती है जिस

के दो पुत्र हैं। बड़ा लड़का गांव गांव दवा बेचा करता था। यह फौजी काम सीख चुका था और "जातीय सेना" का सभासद था। रूस और जापान में लड़ाई छिड़ने पर इस लड़के को लड़ाई मे जाने की आज्ञा हुई। लड़का उस वक्त घर पर नहीं था। मां ने जिलाधीश से जाकर कुछ घंटे की मोहलत मांगी और अपने कपड़े गिरवीं रख कर उसके ढूंढने का प्रबन्ध किया। बहुत कठिनाई से लड़का मिला क्योंकि वह कहीं दूर दवा बेचने गया हुआ था। यद्यपि माता ठीक समय से देर करके लडके को लाई थी परन्तु हाकिमों ने इसका कुछ ख्याल नहीं किया। उस माता ने अपने बालों का गुच्छा और एक युद्ध सम्बन्धी पुस्तक देकर उसको विदा किया और बहुत सी आशीर्वाद दी कि वह देश के हेतु दृढता से युद्ध करे।

एक देशहितैषी बालक।

एक लड़का प्रति दिन स्कूल से लौटकर रोटी बेचता था। लोगों को आश्चर्य हुआ कि ऐसा क्यों करता है क्यों कि उसको स्वयं धन की आवश्यकता नहीं है परन्तु जब लोगों को यह मालूम हुआ कि यह लड़का इसी प्रकार रोटी बेच कर कई रुपए युद्ध-कोश में भेज चुका है तो लोगों का आश्चर्य सराहना और प्रसन्नता में बदल गया।

एक देशहितैषी किसान और उसका वीर पुत्र।

चीन की लड़ाई में एक किसान का लड़का अपने अफसर के आज्ञानुसार बिगुल बजा रहा था कि इतने में एक गोली आकर उसकी छाती में लगी और वह बहुत घायल हुआ पर जब तक उस के शरीर में सांस थे वह बिगुल बजाता ही रहा

और खड़ा रहा। जब बेहोश हो गया तो गिर पड़ा। इस वृतान्त को सुनकर उसके गांव के लोगों ने एक सभा की और उस के पिता को शोक और सहानुभूति का पत्र लिखा, जिसको पढ़कर देश के सच्चेहितैषी पिता ने यह कहा कि शोक की कोई बात नहीं है, मृत्यु एक दिन सबको आवेगी। मेरा लड़का भी एक दिन अपनी झोपड़ी में योंहीं मर जाता। परन्तु अब उसके माता पिता को यह जान कर बड़ा गौरव प्राप्त होता है कि उसने लड़ाई के मैदान में अपने देश और अपनी जन्म भूमि की सेवा करते हुए अनपे प्राण दिए।

एक देशहितैषी तेली।

एक बूढ़ा तेली जगह जगह तेल बेचकर रोटी कमाया करता था। उसने जापान की पुरानी अवस्था भी देखी थी और जापान की उन्नति को देखकर वह अपने चित्त में बड़ा प्रसन्न होता था। एक दिन उसके मन में आई कि मैं निर्धन पुरुष हूं और निर्बल भी हूं। मेरे ऐसा आदमी किस प्रकार देश की उन्नति में सहायता दे सकता है। ईश्वर की सृष्टि में एक भी रचना व्यर्थ नहीं है फिर क्यों न मैं भी देश के लिये कुछ करूं। उसने यह प्रतिज्ञा की कि अपनी नित्य की आमदनी का कुछ अंश रोज जमा करता चलूं। जब देश को आवश्यकता हो तो मैं भी जितना हो सके सहायता करूं। कुछ दिन पीछे चीन-जापान की लड़ाई आरम्भ हुई। बस झट जो कुछ उसने जमा किया था युद्ध-कोश में भेज दिया।

एक कैदी की देशहितैषिता।

एक बढ़ई को खून करने के लिये फांसी का हुकुम हुआ।

हाकिम ने उसको कहा कि तुम इतने बजे फांसी पर चढ़ाए जाओगे। यह सुनकर उसके सम्बन्धियों ने उसके भोजन इत्यादि का प्रबन्ध करने के लिये कुछ रुपए फांसी वाले को दिए जिसपर उससे पूछा गया कि कौन सा भोजन का पदार्थ इस वक्त तुम खाना चाहते हो। उसने कहा कि मैं कुछ नहीं खाना चाहता। अखबार बेचनेवालों की चिल्लाहट से मुझे मालूम हुआ है कि रूसवालों से लड़ाई शुरू हो गई। मेरी इच्छा है कि यह रुपया युद्ध-कोश में भेज दिया जाय। परन्तु यह स्वीकार नहीं किया गया क्योंकि जापान में यह नियम है कि जो पुरुष किसी अभियोग में सज़ा पाए वह अपने देश के लिये शस्त्र भी न उठाने पाए। इस पर उस खूनी ने कहा कि अछा यदि युद्ध-कोश में नहीं तो यह रुपया किसी ऐसे आदमी की सहायता करने में व्यय हो कि जो लड़ाई के मैदान में लड़ता हो और उसका परिवार दुःख में हो। जब यह स्वीकार हुआ तो उसने शान्ति से अपना प्राण त्यागा।

एक देशहितैषी बिधवा।

एक दिन कोबी नगर के टौनहाल म एक बुड्ढी स्त्री ने जाकर कहा कि मैं युद्ध-कोश में कुछ धन देना चाहती हूं। इस पर उसको एक फार्म भरने के लिये दे दिया गया। जब उसने फार्म भर कर लौटाया तो मालूम हुआ कि वह बुढ़िया जो देखने में दरिद्र मालूम होती थी १०,००० येन देना चाहती है। पूछने से मालूम हुआ कि उसका पति इतना रुपया छोड़ गया था और मरते समय यह कह गया था कि यह किसी देशहितकर उद्देश्य में जब आवश्यकता पड़े व्यय किया जाय।

नारंगियां और देशहितैषिता।

एक रोज़ रेलगाड़ी में बैठे हुए बहुत से लोग लड़ाई के

मैदान को जा रहे थे। लोगों ने देखा कि एक जवान आदमी तीसरे दर्जे में बैठा है जिसका चित्त बहुत दुखित और विक्षिप्त मालूम होता था। पूछने पर उसने कहा कि मैं नारंगियां मोल लेने गया था और अब इनको बेचने चला था। इतने ही में युद्ध में चलने का हुकुम आ गया। मेरे पास धन नहीं है। इतना समय नहीं कि इन चार टोकरियों को बेच लूं। इतना सुनते ही सब लोगों ने हाथों हाथ सब नारंगियां मोल ले लीं और उसको नारंगियों के यथार्थ मूल्य से अधिक मिल गया।

दो देशहितैषी मित्र।

रूसी लड़ाई में सब से आगे रहने के लिये कुछ सिपाही चुने गए। इसी समय प्रथम श्रेणी का एक सिपाही एक दूसरे सिपाही को ज़बरदस्ती खींचे हुए लेकर अपने अफसर के सामने आकर कहने लगा कि मैं अब तक कारा हूं मुझे संसार की चिन्ता नहीं है परन्तु मेरे मित्र की स्त्री और तीन बच्चे हैं। इसके बदले मैं लड़ाई में जाऊंगा परन्तु दूसरे ने कहा " नहीं यद्यपि तुम कारे हो पर अपने वृद्ध माता पिता के एकही पुत्र हो। दोनों सिपाहियों की आखों में पानी भर आया और अफसर को कठिन हो गया कि कैसे फैसला करे। अन्त में उसने कहा कि जिसके वृद्ध माता पिता जीवित हैं उसको मैं आज्ञा देता हूं कि वह युद्ध में न जाय। यह कहता हुआ अफसर झट अपनी कोठरी में चला गया कि जिसमें विवाद न बढ़े।

इसी प्रकार सैकड़ों शायद हज़ारों सच्ची कहानियां लिखी जा सकती हैं। एक बेर वालेंटियर (अवैतनिक सेना) लोगों से पूछा गया कि कौन कौन अपने जहाज़ लेजाकर पोर्ट आर्थर के मुहाने पर से वार करने को तय्यार है। इस पर क्षण भर

से २००० आदमी तय्यार होगए। सारजण्ट हयाशी ने झट अपनी उंगली में छूरी से लहू निकाल कर उससे पत्र लिखा कि मैं भी आर्थर बन्दर में सब से पहिले रहूंगा। यह हयाशी भी विचित्र पुरुष है। इसका बाप किसान है पर यह बचपन ही से जंगी जहाज़ चलाना सीखना चाहता था। परन्तु धन के अभाव से परीक्षा पास करना कठिन था। पर इस ने थोड़ा थोड़ा धन जमा करके और कठिन परिश्रम से परीक्षा पास की और बैरक में नौकरी करली। २ वर्ष पीछे एक जंगी जहाज़ लेने वह इङ्गलैंड गया। स० १६०० में यह लडाई में लडा और तब उस स्कूल में भरती हुआ जहां टारपीडो चलाना सिखलाया जाता है। टारपीडो उन नावों या जहाजों को कहते हैं कि जो समुद्र के अन्दर ही अन्दर दुशमन के जहाज़ों को उडा देने के लिये काम मे लाई जाती हैं। इस स्कूल में पढकर वह तीसरे दर्जे का सारजण्ट हुआ परन्तु इस लडाई के समय में वह दूसरे दर्जे का सारजण्ट बना कर भेजा गया। यह अपनी माता का बड़ा भक्त है। अपनी सारी तनख्वाह माता को भेज देता है। एक वेर इसने अपनी माता को पत्र लिखा कि मैं समझता था कि २५ ता० को ४ बजे जब कि बन्दर का रस्ता बन्द करने हमारे जहाज़ गए थे मेरा प्राण नहीं बचेगा परन्तु उन ७७ आदमियों में से १ का भी प्राण नहीं गया कि जिन्होंने इतना बड़ा साहस किया था। इसी पत्र में उस ने अपनी माता को लिखा कि यदि ऐसे खटके का कोई दूसरा अवसर आपड़ेगा तो अश्वय उसमें जाने की आज्ञा मांगूगा और ऐसी अवस्था में तुम मेरे इस पत्र को मेरा अंतिम पत्र समझना। फिर मिस्टर कीजाम्युरा की कथा सुनिये। इनकी अवस्था केवल २४ वर्ष की थी और ये जहाज़ का काम करते थे। इन्होंने कालेज में जहाज़ी शिक्षा पाई थी। अभी थोडे दिन हुए कि एक गोली इनको ऐसी बुरी तरह से लगी कि इनको

अस्पताल भेजने की जरूरत हुई। उस समय वह बन्दूक लिये खड़े थे और घायल होने पर अस्पताल जाना उन्होंने अस्वीकार किया। और यह कहते हुए कि हमको लड़ने अवश्य जाना है कुछ मिनिटों में प्राण त्याग दिया। टोगो महोदय का नाम बहुत से लोग जानते होंगे। इनके दो लड़के हैं और एक लड़की और तीनों बहुत उत्तम शिक्षा पा रहे हैं। जब इनको लड़ाई में जाने की आज्ञा हुई तो अपनी नौकरी की जगह से से तीन दिन के लिये घर गए और वहां जाकर बीमार हो गए। घर के लोगों ने कहा कि बीमारी में जाना अच्छा नहीं उन्होंने उत्तर दिया कि समुद्र पर जाकर मैं हमेशा अच्छा हो जाया करता हूं। जब लड़ाई के स्थान पर पहुंचे उस समय तक शरीर अस्वस्थ था। एक मित्र ने जो इनके घर की ओर आरहा था पूछा कि क्या कुछ घर पर सन्देसा भेजना है। टोगो ने कहा कि कोई विशेष बात नहीं है। सिर्फ इतना कहदेना कि मैं बडा प्रसन्न हूं। इस समय मुझे घर से पत्र भेज कर चित्त को व्यग्र न करैं। जब से वह लडाई में गए हैं घर पर एक पत्र भी नहीं भेजा है। उनके घर के लोगो ने नौकरों को निकाल कर घर का सब काम आप ही करना शुरू करदिया है। सब से बड़ा लड़का प्रति दिन तार द्वारा अपने पिता का समाचार पुछवा मंगाता है और घर में लड़ाई की खबर सुन कर सब लोग प्रसन्न होते हैं।

सब से अधिक प्रशंसनीय बात यह है कि स्वयं मिकाडो हर वक्त लड़ाई पर जाने के लिये तय्यार रहते हैं और उन्होंने अपने लड़कों को जंगी जहाज़ों पर भेज दिया है और यह कहला दिया है कि इन लड़कों के साथ बिलकुल वैसाही बरताव हो कि जैसा साधारण सिपाहियों से किया जाता है और इस समय लड़ाई के जहाज़ों पर राज्य घराने के पांच आदमी हैं कि जो अपनी जन्मभूमि की सेवा की शिक्षा पारहे हैं। दूसरे

के प्राण की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। जितनी सभ्य जातियां हैं उनमें विशेष विशेष प्रकार के प्रबन्ध सारी जाति की ओर से प्राण की रक्षा के हेतु किए जाते हैं। अस्पताल, अनाथालय, अन्धाखाना, मोहताजखाना इत्यादि का होना उच्च श्रेणी की सभ्यता के चिन्ह हैं। ऐसेही उत्तम उद्देश्यों की एक सोसायटी जापान में है जिससे न केवल उस देश की देशहितैषिता का परिचय मिलता है वरंच वहां के लोगों का धार्मिक भाव भी प्रगट होता है। इसका नाम रेड-क्रास सोसायटी है। इसको स्थापित हुए २७ वर्ष हुए। स० १६०२ में टोकियो में इस सोसायटी का १५ वां वार्षिक उत्सव मनाया गया था जिस समय इसमें १ लाख सभासद उप-स्थित थे। इसके साधारण अधिवेशन में महारानी सर्वदा पधारती हैं और १५००० येन वार्षिक महाराज और महारानी अपने पास से इस सोसायटी को प्रदान करते हैं। इसके संस्थापक जापान के दो देशहितैषी हैं। स० १८७७ में काशीमा में युद्ध आरम्भ हुआ। इसमें सैकड़ों आदमी मारे गए। यह युद्ध नहीं था परन्तु एक प्रकार का वि-द्रोह था। जापान निवासियों ही में से कुछ लोगों ने विद्रोह किया था। अधिक खून खराबी देखकर दो महानुभाव जापान हितैषियों के चित में आया कि लड़ाई में घायल होनेवालों की सेवा शुश्रुषा करने का कुछ उपाय सोचना चाहिए। इस पर उन्होंने "हाक्युएशा" नाम की सोसायटी स्थापित की। पीछे से इसी का नाम रेडक्रास सोसायटी रक्खा गया। इस समय इसके ६ लाख सभासद हैं। चीन से जब जापान की लड़ाई हुई थी तो १५८७ स्त्री और मर्द घायल सिपाहियों की सहायता के लिये रक्खे गए थे जिन्होंने डेढ़ लाख आदमियों की सहायता की जिनमें से १४८४ कैदी थे। यह सोसायटी लड़ाई ही में सहायता के लिये नहीं बनी है बरं भूकंप

अथवा आंधी आने पर भी दुखियों की सहायता करती है। इस समय सोसायटी में २६१ डाक्टर, ४५ अपोथाकरी, १९२० दाइयां, ७६३ रोगियों की सेवा करनेवाले और ४५८ काम सीखने वाली दाइयां हैं। सोसायटी का शिबुआ स्थान में एक बड़ा अस्पताल है जिसमें हर एक प्रकार के रोगियों को दवा मिलती है और उनकी सेवा की जाती है। जब कहीं लड़ाई होती है तो इस अस्पताल का बहुत सा सामान लड़ाई के स्थान पर ले जाया जाता है। कभी जहाज़ों पर भी अस्पताल खोले जाते हैं। रूस जापान की लड़ाई में इस सोसायटी की ओर से दो जहाज़ी अस्पताल खोले गए हैं जिनके नाम हकुआएमारु और कोसइमारु हैं। सरकार की ओर से भी वैसे ही दो अस्पताल हैं जिनमें से एक का नाम साइक्युमारु और दूसरे का कोबीमारु है। हमारे देश के पाठकों को आश्चर्य होगा कि जिस समय रण क्षेत्र में घोर युद्ध होता है और सिपाही बैंगन मूली की तरह से काटे जाते हैं उस समय इस सोसायाटी की वीर और धार्मिक स्त्रियां ढूँढ़ ढूँढ़ कर घायल लोगों और मरे और अधमरे सिपाहियों को उठा लाती हैं, उनको दवा देती हैं, पट्टी बांधती हैं और यदि किसी की मृत्यु हो जाय तो उसका उचित संस्कार करती हैं। इन को किसी जाति विशेष, अथवा व्यक्ति विशेष से अधिक सहानुभूति नहीं, सब को एक दृष्टि से देखती हैं यहां तक कि शत्रु की सेना का भी यदि कोई रोगी या दुखिया आ पहुँचता है तो उसकी भी दवा करती हैं। १३ फर्वरी ०४ की कथा है कि २४ रूसी जहाज़ी जो बहुत बीमार थे सोसायटी के अस्पताल में लाए गए। पहिले तो वे डरे परन्तु थोड़े ही दिनों में न केवल इनका डर ही दूर हो गया वरंच ये लोग भी स्वयं दाइयों के साथ जा जा कर दूसरे रोगियों की सेवा करने लगे। इस दया भाव को देख कर रूसियों ने सोसायटी को हृदय से धन्यवाद

दिया और रूसी सरकार ने अस्पताल के मैनेजर को एक पत्र भेजवाया जिसमें सरकार ने अस्पताल और दाइयों का सब व्यय अपने पास से देने की इच्छा प्रगट की और लिखा कि यदि यह स्वीकार न हो तो सोसायटी के कोश में सरकार की ओर से उतने धन की सहायता स्वीकार की जाय। सरकार ने यह भी लिखा कि जिन रूसियों की सेवा शुश्रुषा सोसायटी की दाइयों ने की है उनमें से बहुत से अपने जीवन से निराश होचुके थे परन्तु अब वे बिल्कुल अच्छे हैं और सोसायटी का गुणानुवाद करते हैं। इस पर मैनेजर ने उत्तर दिया कि अस्पताल और दाइयों का व्यय सोसायटी लेना स्वीकार नहीं कर सकती परन्तु किसी और प्रकार की सहायता धन्यवाद सहित स्वीकृत होगी। इस पर रूसी सरकार ने २०० येन भेजवा दिए।

यह वृतान्त तो एक बड़ी सोसायटी का हुआ। इसी तरह की कई और सोसायटियां हैं। रेडक्रास सोसायटी अपना कर्तव्य लड़ाई में लड़नेवाले सिपाहियों के साथ पालन करती है परन्तु बहुत से सिपाही ऐसे भी होते हैं कि जिनके मरने या लूले लंगड़े होने पर परिवार को पालनेवाला कोई नहीं रहता। ऐसे लोगों की सहायता के लिये एक Ladies' Patriotic Association है जिसमें मिकाडो, महारानी और अन्यान्य लोगों ने बड़ी उदारता से दान दिया है। एक और सोसायटी है जिसका नाम Association of Volunteer Nurses है। इसमें बड़े बड़े धनाढ्यों की स्त्रियां और लड़कियां दाइयों का काम सीखती हैं जिसमें आवश्यकता पड़ने पर वे तय्यार रहें। ये अस्पतालों में जाती हैं और दाइयों का काम देखती हैं। धनाढ्यों की लड़कियों की शिक्षा के हेतु एक स्कूल है (The Peeresses' School)। जब रूस और जापान की लड़ाई आरम्भ हुई तो यहां की लड़कियों ने इच्छा

प्रगट की कि वे भी अपने देश की किसी प्रकार सेवा करें। इस पर उन्होंने लम्बी पट्टियों के गोले के गोले बना बना कर रखने शुरू किए। हर रोज तीसरे पहर बिल्कुल सफेद कपड़े पहन कर ये लड़कियां स्कूल में बैठ जाती हैं और इस काम को करती हैं। इन लड़कियों में कई राजघराने की भी हैं।

जापान की देशहितैषिता का सच्चा अनुभव वेही करसकते हैं कि जो वहां के निवासियों से परिचित हैं। भारतवासियों को तो यह सुन कर आश्चर्य होता है कि स्त्री, बालक, राजा, प्रजा सब अपने देश ही की चिन्ता में निमग्न रहते हैं। जब किसी को यह मालूम होजाता है कि अमुक कर्म कर्तव्य देश की उन्नति का साधन होगा फिर वे उसके करने के लिये तय्यार होजाते हैं, चाहे ऐसा करने में जान जाय और धन हर लिया जाय। कहते हैं कि एक फोटोग्राफर का सोलह वर्ष का लड़का जिसको लड़ना तक अच्छी तरह नहीं आता था कहीं से एक तलवार उठा लाया और उसको अपने हाथ से तेज़ करके अपनी माता की आज्ञा ले लड़ाई के स्थान पर बड़े उत्साह से चला गया, और अब तक लड़ रहा है। मां बाप उसकी कथा बड़े अभिमान और गौरव से लोगो को सुनाते हैं। पाठकगण स्वयं जान सकते हैं कि क्यों न ऐसा देश उन्नति के शिखर पर चढ़ जाय।

स्पेन्सर और जापान।

हरबर्ट स्पेन्सर अपने समय का विख्यात दार्शनिक हुआ है। यह इङ्गलैंड देश का रहनेवाला था और अभी थोड़े ही महीने हुए कि इस महानुभाव ने इस असार संसार को छोड़ा है ये अपने मृत्यु पर्यन्त ब्रह्मचारी थे और मरने पर इनके आदेशानुसार इनका शरीर जलाया गया। इनके उच्च और उत्तम सिद्धान्तों

के माननेवाले प्रायः सारे सभ्य देशों में मिलते हैं। इन्हीं में से एक बैरन कन्टारोकनेको जापान निवासी भी हैं। ये जब इङ्गलैंड गए तो स्पेन्सर से मिले और २ घंटे तक वार्तालाप करते रहे। जापानी बैरन को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि जगद्विख्यात दार्शनिक जापान का बड़ा ही प्रेमी है। उनके घर पर उन्होंने जापानी इतिहास, राजनीति, धर्म इत्यादि के सम्बन्ध की बहुत सी पुस्तकें देखीं और इन्होंने बैरन से जापान सम्बन्धी इधर उधर के बड़े टेढ़े टेढ़े प्रश्न पूछे। बैरन ने स्पेन्सर से प्रार्थना की कि जापान को यदि वे कोई विशेष शिक्षा देना चाहें तो उसको लिख कर दें। इसपर उन्होंने उनको एक पत्र लिखा कि जिसको अपने जीवन पर्यन्त छापने की मनाही की। उसी पत्र का कुछ अंश इस पुस्तक में दिया जाता है।

"मेरी सम्मति में जापान को ऐसी नीति का अवलम्बन करना चाहिए कि जिसमें अमेरिका और योरोप के लोग यथा सम्भव उनसे दूर ही रहें। आप लोग (अर्थात् जापानी लोग) जो संधि योरोप के राजाओं से करना चाहते हैं उससे आप का तात्पर्य यह मालूम होता है कि सारे जापान को विदेशी और विदेशी धन के लिये खोल दें। मुझे खेद है कि यह नीति घातक है। यदि इसका परिणाम आप जानना चाहते हैं तो हिन्दुस्तान का इतिहास पढ़िए। एक बेर भी इनमें से किसी बलवान जाति को सहारा मिलना चाहिये और थोड़े ही दिन पीछे यह निश्चय है कि किसी ऐसी छेड़ छाड़ की नीति का बरताव होगा कि जापानियों से झगड़ा हो जाय! इसके होते ही सारे संसार पर, सारे जहान पर जतलाया जायगा कि जापानियों ने आक्रमण किया और सम्भव है कि यह भी कहा जाय कि इस आक्रमण का बदला लेना आवश्यक है। फिर कुछ थोड़ी सी ज़मीन छीन ली जायगी और पीछे से कहेंगे कि इस पर तो हमको विदेशियों की बस्ती होने के कारण

अधिकार है और इसी प्रकार सारे जापान को अपने आधीन करने का प्रयत्न किया जायगा। मेरी सम्मति में जापान का विदेशियों से सम्बन्ध केवल उतनाही अच्छा है कि जितना व्यापार और विद्या के परस्पर लेन देन में आवश्यक हो। परन्तु जापानियों के हाथ में जो खान हों उनमें निश्चय रूप से विदेशियों को काम करने की मनाही करदेनी चाहिये नहीं तो सर्वदा झगड़े की सम्भावना रहेगी क्योंकि ये सभ्य जातियां जो कुछ इनके विदेश में रहने वाले स्वजाति के प्रतिनिधि स्वरूप गुमाश्ते कहते हैं उनको मान लेती हैं। मैं यह भी सलाह देता हूँ कि समुद्र के किनारे का व्यापार जापानियों को अपने ही हाथ में रखना चाहिए।"

बैरन के इस प्रश्न का कि जापान निवासियों को विदेशियों से विवाह करना उचित है या नहीं स्पेन्सर ने यह उत्तर दिया कि यह सर्वथा अयोग्य है। "यह प्रश्न सामाजिक सिद्धान्त सम्बन्धी नहीं है। यथार्थ में यह प्रश्न जीवविज्ञान सम्बन्धी है। मनुष्यों की भिन्न भिन्न जातियों के परस्पर विवाह और पशुओं की वृद्धि का अनुसन्धान करने से असंख्य प्रमाण इस बात के पाए जाते है कि जब मिलने वाली वस्तुएं एक विशेष अंश से तनिक भी विभिन्न होती हैं तो उसका परिणाम सर्वथा आगे चल कर बुरा होता है। गत अनेक वर्षों से मैं स्वयं इन बातों की खोज करता चला आया हूं और यह मेरा दृढ़ विश्वास भिन्न भिन्न प्रकार से प्राप्त की हुई असंख्य बातों को देखकर हुआ है। आधे घंटे के अन्दर इस विश्वास की मैंने परीक्षा भी करा ली है क्योंकि मैं इस समय दिहात में एक विख्यात महानुभाव के साथ ठहरा हुआ हूं कि जिनको पशुओं की वृद्धि सम्बन्धी बड़ा ज्ञान प्राप्त है और उन्होंने अभी अनुसन्धान कर के मेरे विश्वास को पुष्ट किया है। यदि भिन्न भिन्न प्रकार की भेड़ों से आपस में

सम्मिलन कराया जाय अर्थात् जब मिलनेवालों में बहुत अन्तर हो तो इसका परिणाम विशेष कर दूसरी पीढ़ी में बहुत बुरा होता है। भिन्न भिन्न गुणों का कुछ ऐसा असम्बद्ध प्रभाव होता है कि जिससे एक विचित्र जीव उत्पन्न होता है। और बिलकुल ऐसा ही मनुष्यों में होता है। देखो हिन्दुस्तान में युरेशियन और अमेरिका के वर्णशंकर। इसका वैज्ञानिक कारण मुझे यह प्रतीत होता है कि कई पीढ़ियों के पीछे प्रत्येक प्रकार के जीव अपनी वाह्य अवस्था के अनुकूल एक विशेष प्रकार के गुणसमूह प्राप्त कर लेते हैं। यदि ऐसे विभिन्न गुणसमूहों के जीव परस्पर मिलते हैं तो एक ऐसे जीव को उत्पन्न करते हैं कि जिसके गुण दोनों की वाह्य अवस्था के प्रतिकूल होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ये जीव जीवन के किसी काम के नहीं होते और जीवन के किसी निश्चित अवस्था के योग्य नहीं रहते। इसलिये हर प्रकार से तुरन्त जापानियों का विदेशियों से विवाह करना रोक देना चाहिए।"

यह ऋषिवाक्य भारतवासियों के मनन करने योग्य हैं। स्पेन्सर का राजनैतिक सिद्धान्त यह था कि प्रत्येक व्यक्ति तथा जाति को अपनी मुक्ति प्राप्त करने के प्रयत्न में स्वतंत्र होना चाहिए और जो दूसरा व्यक्ति तथा दूसरी जाति बल तथा छल से उसके स्वातंत्र्य के श्रोत को रोके वे महा पाप के भागी हैं।

रूस और जापान के युद्ध का कारण।

आज दिन भारतवर्ष के पठित समाज में बिरले जनहीं ऐसे होंगे जिन्होंने रूस और जापान के महा-भयङ्कर युद्ध के सम्बाद को न सुना हो। कभी कोई दैनिक, कभी

कोई साप्ताहिक, और कभी कोई मासिक समाचार पत्र को हाथ में लिए, आश्चर्यजनित मुसकुराहट के साथ अपने पड़ोसी की ओर दौड़ा आता और समाचार पत्र को उसके आगे रख युद्ध सम्बाद स्तम्भ को भली भांति देखने का अनुरोध करता है। कारण इसका यह है कि उसमें कोई तड़ित सम्बाद इस युद्ध की किसी विशेष घटना के विषय में ऐसा मुद्रित हुआ है जिसे सुन मनुष्य जाति के हृदय-स्थल में, बीरत्व के साथ साथ आश्चर्य्य एवम् शोक और उत्साह का प्रादुर्भाव हो। दोनों जन उस सम्बाद को बड़े चाव से हँस हँस कर पढ़ते और अन्य पड़ोसियों को उसे सुनाने की उत्सुकता प्रगट करते हैं, कि इस बीच में दो चार जन और आये और सभों ने सम्बाद जनित आनन्द का भोग करना प्रारम्भ किया। प्रायः इस प्रकार आज कल कई महीनों से पढ़े लिखे युवक सज्जन, कि जिनकी नसों में उत्साह और अभिलाषा भरी हुई है कई घंटे बिताते हैं। कौन नहीं जानता कि जापान के ताहशाही भारतवर्ष में भी बीर बृटिश-सिंहाङ्कित ध्वजा की छांह में, पश्चिमीय साहित्य और बिज्ञान के सहारे, शारीरिक एवम् मस्तिष्क सम्बन्धी आश्चर्य्यजनक उन्नति, सब प्रकार जीवन के सब व्यवहारों में हुई है। यही कारण है कि नव शिक्षित युवक जन अपने सहशाही जापान के नव-शिक्षित युवकों को अपने स्वत्वों के रक्षार्थ यूरोप के एक प्रधान सम्राट, सारी एशिया के "जार महाशय" के साथ युद्ध करने का साहस करते देख इतने प्रसन्न होते हैं और इस युद्ध के समाचार को इतने चाव से पढ़ते पढ़ाते और सुनते सुनाते हैं।

अनेक लोग, जिन्हें इस बात से अनभिज्ञता है कि रूस और जापान पुर्वीय एशिया में भले पड़ोसियों की नाईं क्यों नहीं रह सकते हैं घबड़ाकर प्रश्न कर बैठते हैं "यह सब क्यों हो रहा है"? ऐसे लोगों को प्रायः यही उत्तर मिलता है कि

युद्ध का मूल कारण कोरिया में अधिकतर प्रभावशाली होने का उद्योग है। जापान अपनी रक्षा और स्वतन्त्रता के लिये चाहता है कि उसे छोड़ कर और कोई राज्य उस दुखी, दुशासित, किन्तु स्वभावतः धनवान देश में प्रधान अधिकार न रक्खे। मानचित्र देखने से जान पड़ेगा कि कोरिया का जापान से कितना निकटवर्ती सम्बन्ध है। उस प्रायद्वीप से स्थिरता-प्राप्त शत्रु-राजा जापानी सामुद्रिक किनारों पर थोड़े ही घण्टों में जा सकता है। इसके अतिरिक्त, कोरिया, बहुत करके, जापान का अन्न-कोश है। वह उसकी सर्वदा बढ़ती हुई प्रजा की बाढ़ को अपने में रख लेने के लिये प्राकृतिक पात्र है और वहीं की बनी वस्तुओं के लिये एक सर्वोत्तम बाज़ार है। शताब्दियों से बिलग रहने के कारण, और घृणित रूप से गलित एवम् मूर्खतामय अयोग्य शासन प्रणाली के कारण, कोरिया का स्वाभाविक धन-मार्ग प्रायः बञ्जर पड़ा रहता है। यह प्रगट रूप से जापान का कर्तव्य है कि वह इन विस्तृत और व्यक्त धन के द्वारों को खोले और उसने इस कार्य्य में अपनी साधारण दक्षता से हाथ भी लगा दिया है। अभी लों उसने अपना ध्यान रेल बनाने में लगाया है किन्तु उसका प्रभाव वाणिज्य और शिल्प तथा आय व्यय की प्रत्येक शाखा पर पड़ रहा है।

ठीक यही भौगोलिक बात कोरिया को रूस के लिये भी युद्ध-सम्बन्धी-कार्रवाइयों के उपयोगी बनाती है। क्योंकि जापान यदि दक्षिणीय सामुद्रिक किनारे पर किले-बन्दी करके दृढ़ होने पावे, तो वह सङ्कीर्ण समुद्रों को उन जहाज़ों के लिये बन्द कर सकता है जो रूस के पैसेफिक समुद्र पर के प्राचीन इलाकों और उसके नवीन प्राप्त इलाकों के बीच आते जाते हैं, चाहे वे इलाके रेहन लिये हों वा केवल थोड़े काल के लिये उसके आधीन हों। रूस को अपने आवागमन के

मार्ग में इस प्रकार की बाधा होने की सम्भावना असह्य बूझ पड़ती है, किन्तु जापान अपने निषेध को भुलवाने को तत्पर है, क्योंकि वह प्रगट रूप से उत्तर देता है कि यद्यपि रूस अपने ही कथन के अनुसार मञ्चूरिया में थोड़े ही काल लों ठहरना चाहता है पर यह बात उसके लिये कोई बड़ी हानिकारक नहीं हो सकती है कि सामुद्रिक मार्ग उस देश और उसके मुख्य आधीन के देशों के बीच भविष्य में जापान के अधिकार में रहे। तिसपर भी जापान की इच्छा रूस के साथ शान्ति-पूर्वक मेल कर लेने की थी। वह कहता था कि मैं कोरिया के दक्षिणी किनारे पर कोई क़िला न बनवाऊंगा।

किन्तु निराली कोरिया ही विवाद का कारण नहीं है। यदि अकेले इसी पर तकरार होता, तो कुछ प्रबन्ध हो जाना सम्भव होता, पर मञ्चूरिया का झगड़ा भी रहने से जापान इसके प्रस्तावों में से एक को भी स्वीकृत न कर सका। पहिले तो कोरिया की वह "स्वतन्त्रता और राजकीय पवित्रता" (चाहे वह कितनी ही नाम मात्र की हो) जाती रहेगी जिसके लिये जापान और बृटेन अपनी मैत्री के कारण शपथ खाए हुए हैं। और दूसरे जापान सी जाति को, जिसने रूस के झुकाव को, जो तेल के धव्वे की नाई प्रत्येक जगह में फैलता है मन में बैठा लिया था, यह अच्छा न लगा।

यदि कोरिया का प्रश्न सम्भवतः शान्त किया जा सकता तो कुछ वर्षों लों रूस की अवस्था मञ्चूरिया में ऐसी न होती। उस नाम मात्र को चीनी इलाक़े में रूस का बड़े दल बल के साथ रहना जापान के लिये प्रत्येक समय में अत्यन्त ही दुखद था और प्रतिज्ञा करके नियत तिथि पर मंचूरिया खाली न करने से अनेक सन्देह भी उत्पन्न हो गए थे। प्रतिज्ञा

पूरी करने के विषय में यह आना कानी जापान के अतिरिक्त अन्य शक्तियों को भी अपमान सूचक जान पड़ी। अमेरिका को यह सीधे और प्रगट भाव से घुड़की जान पड़ी क्योंकि उसे अत्यन्त ही दृढ़ता से खाली कर देने के लिये विश्वास दिलाए गए थे और फिर वे अत्यन्त शीघ्रही अपनी राजकीय कूट नीति की विजय मान लिये गये।

अमेरिका और वृटेन ने बार बार समाचार भेजा कि "खुले-द्वार की कूटनीति" अर्थात् सब जातियों के लिये, जो चीनी साम्राज्य के साथ बाणिज्य करती हैं समान स्वत्व और लाभ का होना, दूरवर्ती पूर्व में हम लोगों की प्रधान चिन्ता है और अभी लों रूस ने हमलोगों के लिये द्वार को नहीं बन्द किया है। कतिपय सुचतुर निरीक्षक लोगों का विश्वास है कि वह द्वार वास्तव में न खुला और न बन्दही है पर ऐसे लक्षण देख पड़ रहे हैं जिनसे यह जान पड़ता है कि वह द्वार धीरे धीरे चुपचाप बन्द हो जायगा। किन्तु हाकिमी तौर पर मञ्चूरिया में द्वार अब लों खुला ही है किन्तु जापान ने इस से चाहा कि रूस नियमानुसार सन्धि पत्र अपने बार बार की हुई प्रतिज्ञा को पूरा करने के विषय में लिख देवे कि वह अपने फौलादी पकड़ को उन देशों पर से, जो अब भी भिन्न भिन्न जातियों के नियमानुसार चीनी राज्य हैं, ढीला करेगा। जापान इस विषय में सहमत था कि रूस मञ्चूरिया में उन लाभों को भोगा करे, जिन्हें उसने चीन को दबा कर वा चापलूसी से धोखा देकर देने के लिये वाध्य किया हो किन्तु उसने इस बात का हठ किया कि वह सन्धि पत्र के आकार में उन देशों पर चीन का प्रधान अधिकार होना माने। क्योंकि जापान को रूस के उन देशों में सर्वदा रहने का यथार्थ अर्थ भली भांति मालूम है। वह जानता है कि रूस क्या चाहता है।

रूस का अभिप्राय, जिसे उसने दृढ़ता से, बिना तनिक भी इधर उधर डिगे, आश्चर्य्य जनक सन्तोष, वीरता एवम् चतुरता के साथ सिद्ध करने का यत्न किया है, वह इतना विशाल है कि उसके परम हठी शत्रु भी उसके बड़प्पन और गम्भीरता को स्वीकार करते हैं और उन लोगों की अवश्य प्रतिष्ठा करेंगे, जो पीढ़ियों से उसकी पूर्णता के लिये यत्न करते चले आते हैं।

यह अभिप्राय एशिया में प्रधान शक्ति रखने का है और इसके प्राप्त करने का उपाय यह है कि ऐसा सामुद्रिक और सैनिक बल पहिले महाद्वीप के उत्तरीय अर्द्ध भाग में स्थापित किया जाय कि जिससे वृहत चीन साम्राज्य का धनोपार्जन का मार्ग और उसकी खचाखच भरी प्रजा कुछ काल में उत्तरीय जेता के (जो कि पुर्व ही से साइबिरिया से विस्तृत देश का स्वामी है, हस्तगत हो जाय और इस प्रकार उसे एशिया के निवासियों के भाग्य का निर्णयकरनेवाला और पैसिफिक समुद्र का शासक बना दे। निस्सन्देह यह एक बड़ा विचार है, पर यह विचार ऐसा है, जिसको करोड़ों रुसी (उस गम्भीर चोट के उपरान्त भी, जिसे उनकी सामुद्रिक प्रतिष्ठा ने अभी हाल में सहा है) उस बात की, जो अवश्य ही समुचित समय में होने वाली है एक पुर्व आभा मात्र मानते हैं। और न ज़ार की सारी प्रजा इस भविष्य पर खुशी के मारे उतान हो गई है। बहुतेरों को उस बड़ी विपतियों का ज्ञान भी है, जो इस अभिप्राय के सिद्ध्यर्थ भोगनी पड़ेंगी, और वे उस रक्त और धन के महान व्यय पर जो इसके कारण करना पड़ा है और करते रहना ही होगा शोक करते हैं। किन्तु रुसी लोग स्वभावतः भाग्य के भरोसेवाले होते हैं और वे अपनी जाति की इस अग्र-यात्रा को नये नये बड़े साम्राज्यों पर विजय प्राप्त करने

का शकुन ही मानते हैं। "यह पवित्र रूस का भाग्य है" यही दस में से नौ रूसी, जिन्हें कुछ भी सोचने की शक्ति प्राप्त है सोचते हैं। यह वही भाग्य का भरोसा है जिसके कारण अन्य जातियों के लिये रूस की प्रजाओं की पूर्वीय यात्रा ऐसे गम्भीर रूप से ध्यान देने योग्य बात बनाती है। रूसी लोग अपने "विशाल ललाट" में परमेश्वर की इच्छा का प्रगट प्रकाश देखते हैं। क्योंकि यह उनका दृढ़ जातीय विश्वास है कि सर्वशक्तिमान जगदीश्वर ने संसार के सारे लोगों में से उन्हीं को संसार का रक्षक बनाने के लिये चुन लिया है। उनका विश्वास है कि समुचित समय में सारी अन्य जातियां विशेष करके वे जो अपने को स्वतन्त्र पुकारती हैं रूस की ओर अपनी अन्तिम दुखी अवस्था में और अराजकता से दुर्बल हो कर और उससे, जिसे बहुतेरे रूसी स्वतन्त्र का कुलटापन पुकारते हैं थक कर और निर्बल हो कर सर्वतोभाव स्वतन्त्र ज़ार महाप्रभु के दयाशील शासन की आधीनी में आने की प्रार्थना करेंगी, और वे रूस की निर्दोष धर्म्म-मण्डली की गोद में सुख चैन और आराम खोजैंगी। और यह विश्वास केवल धर्म्मोन्मत्त खेतिहरों, गुप्त-धर्म्म-क्रिया करने-वाले पुरोहितों और स्वप्न-शील उपाध्यायों का नहीं है। यह विश्वास, उन कार्य्य-शील लोगों का है, जो आज दिन रूसी साम्राज्य पर शासन करते हैं। एक प्रकार की कँपकँपी सी हो जाती है जब ऐसे विश्वास कोई सरल, बड़े ही सभ्य और पूर्ण विद्वान-जन प्रगट करने लगते हैं और वह कँपकँपी और भी बढ़ जाती है जब वे दैवी-शक्ति-जनित स्वर से उसे प्रगट करने लगते हैं और अपनी अन्य समय में सीधी सादी आंखों को उन्मत्त लोगों की नाई चमकाते और अपने बदन की कान्ति को सर्वतो भाव पलट लेते हैं। ऐसे ही उत्साह और गर्व के समय में रूसवालों ने वे सङ्कल्प किये, जिनके

कारण एशिया का मानचित्र दूसरे प्रकार से बनाना पड़ा। यही भाव, यही उत्साह है, जिसको पाकर वे धर्म्म जैसा जोश और स्वदेशहितैषिता इन दोनों को मिला कर एक ऐसा नया भाव उत्पन्न करते हैं, जिसके कारण ज़ार महोदय के योद्धे (Soldiers) जापानियों के युद्ध के लिये भयानक शत्रु बनाते हैं।

यद्यपि रूसियों की यह जातीय और धर्म्म-सम्बन्धी भावना दृढ़ है तिसपर भी जापानियों के हृदय में और भी दृढ़ भाव हैं। क्योंकि वे अधिक तर कार्य्य-पटुता के साथ उत्साह-पूर्ण हैं। यह ऐसी सूक्ष्म भावना है जैसी और कभी किसी जाति के हृदय में नहीं उत्पन्न हुई थी—अर्थात् वह भावना ऐसी है जो जाति की जाति को समय आ पड़ने पर बीर बना देती है। इसे जापानी अपनी भाषा में यों प्रगट करते हैं "यमतो हमशी-द" अर्थात् "प्राचीन जापान का भाव"।

आश्चर्य्यित संसार ने अब उस अजेय भाव को कार्य्य में परिणत करने से क्या हो सकता है उसका स्पष्ट आकार देख लिया है। वह बड़ा नाटक, जिस पर का पर्दा अब उठा है इस कार्वाई का अनेक और उदाहरण दिखलावेगा।

अब पासा पड़ गया, और जातियां, दम रोक कर, एक बड़े युद्ध के आरम्भ में, जिसका परिणाम पहिले से कोई मनुष्य नहीं देख सकता, खड़ी हैं। इस में सन्देह नहीं कि सारी बड़ी बड़ी सभ्य जातियां, विशेष कर सम्मिलित प्रदेश (यूनाइटेड स्टेट्स) इस बात का शुद्ध हृदय से यत्न कर रही हैं कि यह युद्ध जिसे निःस्वार्थ जातियां रोकने के योग्य न हो सकीं जापान और रूस ही के बीच में रहे। किन्तु निश्चय नहीं है कि अपने उद्योग में वे सफल-मनोरथ होंगी। इसके विपरीत यह भय है

कि कहीं वह आग जो " दूरवर्ती पूर्व " में लगी है जलते हुए तेल की नाई फैले और अपनी नष्टकारी लवर में एक जाति के उपरान्त दूसरी जाति को समेट लेवे।

बहुत काल लों युद्ध होने के उपरान्त यदि अन्त में रूस की बहुसंख्यक सेना जापान के वीर योद्धाओं के मोहड़े को फेर भी देवे तौ भी बृटेन जापान को जो उसका मित्र और सहायक है जेता द्वारा ऐसा पङ्गुल न होने देगी कि वह पूर्वीय एशिया और उत्तरीय पैसेफिक सागर में अपनी नाई एक बडी शक्ति का भुक्ता न रहे। यह आशा नहीं की जा सकती है कि मास्को वाले (=रूसी क्योंकि उसकी पूर्व देशों की राजधानी मास्को ही है) अन्तिम विजय से फूल कर अपना हाथ, बृटेन की प्रार्थना पर, उठा लेंगे। सेना की ही कड़ी धमकी उन पर प्रभाव कर सकती है, और इसका भी तभी प्रभाव हो सकता है जब एक बड़े और थकित करने वाले युद्ध के अन्त में वह अपने को कठिन और दृढ़प्रतिज्ञ बृटेन के सन्मुख ऐकाकी पावे। ऐसा ऐकाकीपन निस्सन्देह हो सकता है यदि फ्रान्स के रूस की सहायता करने की दृढ़ सम्भावना उस समय न हो जब उसको दो शत्रुओं से सामना करना पड़े।

बृटेन के इस युद्ध में खिंच जाने का भय उतनाही बड़ा इससे प्रतिकूल दशा होने पर भी है। फ्रान्स बृटेन के साथ और घनिष्ट मैत्री हाल में करने पर भी कठिनता से उस समय आलस्य से खड़ा रहेगा जब कि उसकी मित्र और सहायक जाति और उसका अत्युनुमोदित सङ्गी रूस एक ऐसे विद्रोही के विजय से, जो अतिशय तुच्छ और एशियाटिक शत्रु है नीचा देख रहा है। जापान के हाथ से रूस का अन्त में पराजय होना, उसके दबदबे का चूर चूर होकर धूल में

मिल जाता है। इस दशा में उसका मञ्चूरिया पर स्वामी सरिस अधिकार जाता रहेगा, चीन और कोरिया में जो वह अपना प्रधानत्व रखना चाहता है उसका पैसेफिक पर कहीं पता न लगेगा, स्वामी बनकर रहने का उसका विचार स्वप्न हो जायगा, और सारी एशिया का प्रधान साम्राज्य प्राप्त करने की उसकी अभिलाषा एक दम चूर चूर हो जायगी। एशिया में उसके बल का नाश देख यूरोप में, भिन्न भिन्न जातियाँ उसकी वृहत् प्रतिमूर्ति को देखकर, जिसके मिट्टी के पावों को जापान ने तोड़ फोड़कर सम्पूर्णतः छिन्न भिन्न कर दिया है भयातुर न खड़ी रहेंगी। यह सर्व उच्चपदस्थ न रहने पावेगा। फ्रान्स का प्रजाधिकारी शासन, जैसा वह इस समय निर्म्मित है, उसको लड़ाई में फसाना न चाहेगा विशेष कर इस कारण कि इससे रूस को ऐसे पराजय से बचाने के लिये वृटेन से उसे युद्ध करना पड़ेगा। किन्तु उस शासन मण्डली के पीछे फ्रान्स की प्रजा-समुदाय है जो अभी लों रूस पर विमोहित है। अर्थात् परिमित व्यय करने हारे फ्रान्स के लोग, जिन्होंने अपनी दुष्प्राप्य बचत में से अपने मास्कोवाले सहायक को, उसके कोष की पूर्ति के लिये तथा उसके शिल्प और रेलों के कारोबार में ४४ करोड़ रुपये सी बड़ी रक़म उधार दी है। इस द्रव्य में से, जो उनके फरान्सीसी मित्रों ने ऋण दिया है, रूसवालों ने एशिया के आरपार रेल बनाने और उसकी एक शाखा चीन सागर के तट लों खोलने और उस बड़े जहाज़ों के समूह के बनाने में, जिसे उन्होंने इतने शीघ्र लग भग चोरी के साथ तय्यार किया है, व्यय किया है। फ्रान्सीसी लोग तब क्यों न अपने बड़े ऋणी के भाग्य के विषय में इतने अधिक चिन्तित हों?

रूस-जापान के युद्ध के अद्यापि अनिश्चित भविष्य में एक

और भयानक भय छिपा है अर्थात् इस बात की सम्भावना कि कहीं वृटेन और फ्रान्स अपने इस संग्राम में अकार्य्य-शील (मध्यम पद वाले अर्थात् मुख्य लड़नेवाले नहीं) द्वितीय के पद को छोड़ने को और नाम को तो मुख्य लड़नेवालों की ओर से किन्तु वास्तव में अपने ही स्वार्थों के रक्षार्थ एक दूसरे पर तलवार खींचने को वाध्य न होवें। ऐसा भविष्य सोचने में भी डरावना है । यह दूर हटाया जा सकता है यदि दोनों दल में से कोई एक तीसरे साझी को अपने में मिलाने की आशा कर सके और वह साझी ऐसा बलवान होवे कि वह अपने मित्र का पल्ला इतना भारी कर देवे कि उससे शत्रुओं का युद्ध करना बड़ा ही कठिन दीख पड़ने लगे । ऐसी दशा उस समय होसकती है जब कि अमेरिका का संयुक्त प्रदेश प्रगट भाव से शब्द और कर्म से (क्योंकि निरे शब्दों का मूल्य संसार के कारबार में नहीं होता जब एक बार तोप छुट चुकती है) उस ओर होने की घोषणा दे देवे जिस ओर कि उसकी सहानुभूति बिना सन्देह झुकी है और जिसपर उसका वास्तविक स्वार्थ निर्भर है ।

किन्तु यह अकेली बात कि अमेरिका उस दृढ़प्रतिज्ञ कार्य्य से, जो, यदि वृटेन के साथ किया जाता तो इस भयानक युद्ध को न होने देता, अत्यन्त ही सूक्ष्म आशा इस बात की दिखलाती है कि इस कठिन अवसर पर वह पैसिफिक सागर पर एक बड़ी शक्ति की नाईं अपनी बड़ी उत्तरदायिता को समझेगी । यह सत्य है कि उसने चीन के निःस्वार्थत्व की रक्षा निमित्त एवम उसके राज्य के ज्यों के त्यों रहे दिए जाने के अर्थ भिन्न भिन्न जातियों के एका करने के यत्न में अगुआ का पद ग्रहण किया और ऐसा यत्न सराहनीय भी है किन्तु शक्तियों के एके का अनुभव जो सन् १६००

ई० में चीन में परदेशियों के विरुद्ध विद्रोह के दमन के समय हुआ था उससे दूरवर्ती पूर्व के विषय में भिन्न भिन्न जातियों के मध्य एके के लाभकारी होने के विषय में अविश्वासकता उत्पन्न होती है।

संसारव्यापी एक अन्य शक्ति और भी है, जिसका प्रभाव यदि दोनों युद्ध करने हारी जातियों में से किसी की ओर सहायतार्थ हो जावे तो युद्ध का परिणाम सर्वतो भाव बदल सकता है। 'दूरवर्ती पूर्व' के सम्बन्ध में जर्मनी की कूट-नीति के बार बार घोषित किए जाने से कैसर (जर्मन सम्राट) के इस संकल्प पर कि वे इस युद्ध में घसीटा जाना नहीं चाहते प्रकाश्य भाव से बल पड़ा है। जर्मनी यह देखकर दुखी नहीं है कि दो बड़े बड़े सम्राट (विशेष कर इस कारण कि दोनों में से एक उसका बलवान परोसी है) आपस में एक दूसरे के निमित्त अपनी लड़ने की शक्ति क्षाण करें। चतुर *ट्यूटन दोनों लड़नेवाली जातियों से बड़ा व्यापार करने की आशा रखता है और कौन जाने कोई अनसोचा किन्तु बहुमुल्य "कुछ" अन्त में किसी प्रकार उसके हाथ आ जावे। साधारण रीति से जर्मनी रूस का पक्ष करता है, उस शक्ति के साथ सदा मैत्री रखना जर्म्मन कूटनीति का एक प्रधान अङ्ग सर्वदा से चला आता है। किन्तु जर्म्मन के अधिकांश निवासी अपने हृदयस्थल में जापान के साथ सहानुभूति रखते हैं। केवल

---

* जर्मनी के लोग भारतीय एवम इङ्गलैण्डीय जनों की नांई आर्य्य जाति के हैं केवल इतना भेद है कि यहां के ब्राह्मण क्षत्री पुर्वीय और वहां के पश्चिमीय शाखा के हैं। जैसे भारत के ब्राह्मण, क्षत्री, आर्य्य नाम से, वैसेही जर्म्मनी के आर्य्य 'ट्यूटन' नाम से सम्बोधित होते हैं।

वे प्रगट रूप से इस कारण उसे प्रकाश करने का साहस नहीं करते कि कहीँ इससे अङ्गरेज लोगोँ को प्रसन्नता न मिल जाय। किन्तु अभी लोँ जर्मनी दूरवर्ती पूर्व के राजकीय मुआमिलोँ में एक अपरिचित्त शक्ति है। और 'कैसर' के शासक होने के कारण यह भय-रहित बात नहीँ है कि कोई शीघ्रता से कह देवे कि वह सम्भवतः इस प्रणाली से व्यवहार करेंगे।

'दूरवर्ती पूर्व में एक और अपरिचित्त शक्ति है—चीन। इस युद्ध में चीन कितना भाग लेगा यह अभी अज्ञात है। किन्तु यह सम्भव जान पड़ता है कि उसके वर्तमान शासक उस समय तक यह निर्णय न कर सकेंगे कि वे दोनों दलों में से किस ओर हों। जबलों कि कोई निर्णयकारी युद्ध यह न बता देवे कि युद्ध की व्याघ्र-सदृश बिल्ली किस ओर कूदेगी। यदि जापान जल और थल दोनों में विजयी दीख पड़े, तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि चीन फिर कर रूस को जिसके हाथों से उसको ऐसा दु-ख हुआ है कि जो उसके अदमनीय गर्व के लिये बड़ा ही कठिन बूझ पड़ा है, फाड़ डालेगा। किम्बा चीन की इम्पीरियल गवर्मेण्ट, अर्थात् राज-राजेश्वर की पति-विहीना माता और उसके मन्त्री, युद्ध करने हारे दोनों दलों में से किसी की ओर प्रगट भाव से हों वा चीन निःस्वार्थ बना रहे पर यह बात दृढ़ रूप से सम्भव है कि चीनियों में से अधिकांश, विशेष कर संशोधित समाज के युवक जन जो केवल ऐसे हैं जिनमें स्वदेशहितैषिता के भाव का होना कहा जा सकता है, अपने पहिले शत्रु और न्यायपक्षग्रहण तथा सरल हृदय जेता के साथ रूस के साथ युद्ध करने में मिल जांयगे वा कम से कम उसकी सहायता करेंगे।

इन निरे चीनी वालण्टियरों के अतिरिक्त [illegible]

के घूमने वाले सवार जिनमें से बहुतेरे डांकू हैं और अपने कर्म्म को हाथियार से सुसज्जित दल बांध कर कररहे हैं, इस सुअवसर को पाकर अवश्यमेव इसको दुःख देंगे। ये अर्द्ध आरण्यक घुड़ चढ़ जापानी अवसरों की शिक्षा में कुछ काल रहने पर, लाभकारी रीति से जापानी अश्वारोही सेना को बढ़ावेंगे जो कि संख्या के ध्यान से अपने अन्य शस्त्रवालों से अत्यन्त ही दुर्वल है। मञ्चूरिया के इस दल और उस अनियमित अश्वारोही सेना की सहायता जो सरलता से मङ्गोल जाति के तातारी दे सकते हैं जापान के लिये बड़ी उपयोगी होगी। प्रत्येक रूसवाले का भाग्य जो घायल हो कर, वा बिना घायल, चीनियों वा मञ्चूरियों वा मङ्गोलों के हाथ में संयोग से पड़ जावेगा, सोचने में बड़ा भयावह है। उन निष्ठुरताओं के लिये, जिन्हें ज़ार की सेना ने 'बाक्सर विद्रोह' के दमन में दिखलाया था चीनी निर्दयता की सारी पिशाची बारीकी के साथ बदला निकालेंगे। और यह कार्रवाई उन जापानी अफ़सरों के इस बात के लिये परिश्रम यत्न करने पर भी, जो इन अनियमित सेनाओं के साथ नियुक्त होकर उन्हें सभ्य जातियों के युद्ध की रीति के अनुसार चलने के लिये बाध्य करेंगे, की जायगी। सम्भवतः जापानी इन अनियमित सेनाओं के असभ्यतामयी रक्त-पिपासा को शान्त करने में चूक जांयगे और रूस और उसके मित्र लोग उनके दुष्टाचार का दोष शीघ्रता से जापान पर लगावेंगे। जापान की सर्कार इस भय पर भली भांति चैतन्य है।

उस प्रभाव का सारा प्रश्न जो रूस और जापान का युद्ध चीन पर डालेगा इतना बड़ा और इतनी भय-प्रद सम्भावनाओं से भरा है कि जिनका प्रभाव सारे संसार पर ऐसा पड़ेगा कि उससे मन घबड़ा उठता है। कोई मनुष्य उसकी प्रधान उपयोगिता का अनुमान उस समय अत्यन्त

उत्तमता के साथ करसकेगा जब कि वह मनुष्य सोचेगा कि रूस की अन्तिम विजय चीन को, उसके बहु-संख्यक जैन समुदाय के साथ उसका आश्रित करदेगी, और साथही इसके जापान की विजय भी चीनियों को जेता के हस्त-गत करदेगी। ऐसे लक्षण दिखाई देरहे हैं कि जिनसे बोध होता है कि चीन और विशेष कर उसकी प्रजा का सर्वोत्तम और अत्यन्त ही होनहार भाग अपनी पथदर्शिता के निमित्त जापान की ओर फिर रहा है। हमलोग जब यह सोचते हैं कि चीन की ४० करोड़ प्रजा अपनी अद्भुत शक्ति, निश्चित चतुरता, अद्वितीय परिश्रम शीलता और परिमित-व्यय कुशलता अपने जापानी चचेरे भाइयों द्वारा अन्य नए मर्गों में सञ्चालित करने देगी एवम् अपने उत्कृष्ट मुख को उस सुप्रकाश शिक्षा से नेक और विश्वासपात्र शासन में पश्चिमीय विद्याओं के सारे बल की सहायता से स्वर्गीय साम्राज्य के आश्चर्य जनक प्राकृतिक धन के मार्गों को उन्नति में लगाने देगी तब हमलोगों को उसका भविष्य विचित्र दिखाई देता है। जापान की अगुआई और उसकी शिक्षा दीक्षा से चीन की युद्ध अकुशल जाति भी सम्भवतः ऐसी जल थल सैन्य उत्पन्न करने के योग्य होगी जो अपने देश को विदेशियों के आक्रमण से रक्षित और भिन्न भिन्न जातियों के सम्बन्ध वाले मामिलों में अपने पद पर दृढ़ रखने के योग्य होने के लिये अलम् रीति से शक्ति सम्पन्न होगी। चीन की प्रजा का लड़ने हारा बल इस प्रकार विजयी जापान के सामुद्रिक और सैनिक बल से मिलकर एक बलवान प्रभाव यूरोप अमेरिका और यहाँ लों कि आस्ट्रेलिया पर भी उत्पन्न करेगा। किन्तु यदि चीन अपना भाग्य जापान के हस्तगत कर देवे और उसीको अपना "पथ-दर्शक, दार्शनिक और मित्र माने, तो यह भविष्य उस भयानक होड़ की सत्यता के आगे तुच्छ हो जाता है जो

सारे संसार के सम्मुख वाणिज्य में, शिल्प में तथा अन्य प्रकार के कारोबार में और समुद्र द्वारा वाणिज्य करने के कार्य्य में आवेगी। ४० करोड़ मजूरे सर्वदा नाम मात्र मजूरी पर परिश्रम करते हुए, एक ऐसी मजूरों की सेना बनावेंगे, जिसके आगे अन्य जातियां जो सदैव अधिकतर अवकाश और उच्चतर मजूरी के लिये यत्न करती रहती हैं पूर्णतया हताश हो जावेंगी। इस प्रकार जापान की विजय कुशकुन-मय होने पर भी अधिकतर सम्भव है, कि वह शेष संसार के लिये रूस की अन्तिम विजय की अपेक्षा न्यूनतर भयानक हों। बहुत दिन लगेगा कि यह घटना रूस को एशिया के भाग्य का निपटेरा करनेहारा बना दे और यूरोप में उसको ऐसा प्रभावशाली कर दे कि वह सारी स्वतंत्र जातियों के लिये स्थायी भय का कारण हो जाय। इस बात से रूस और जापान के मध्य संग्राम होने की विस्तीर्ण सम्भावनाओं के समझने में बड़ी सहायता मिलेगी, यदि ध्यान दूसरी दिशा की ओर जहां पर कि वे बड़े बड़े फलों की उत्पादक हो सकती हैं आकार्षित किया जावे। पैसेफिक स्थित लड़ाई के जहाज़ सम्बन्धी रूसी बल पूर्वही युद्ध के २४ घण्टों के बीच जापानी जङ्गी जहाज़ों के आक्रमण से वास्तव में पराजित हो गया है और रूस को इस बात की आवश्यकता पड़ सकती है कि वह अपने खोए हुए जहाज़ों की पूर्ति अन्यों से, जो काले सागर से निकाले जावें, करे। 'दूरवर्ती पूर्व' में पहुंचने के लियें, इन जहाज़ों को बासफरस की खाड़ी में से, जो तुर्क लोगों (रूम के सम्राट) के आधीन है और डारडेनिलीज़ के तङ्ग (सङ्कीर्ण) मार्ग से होकर जाना होगा। रूम के सुलतान हामिद अली को यह स्वत्व प्राप्त है, जिसको भिन्न भिन्न जातियों के मध्य के सन्धिपत्र ने स्वीकृत भी किया है कि वह सारे विदेशी जहाज़ों के लिये, जिनका अभिष्ट

संग्राम होवे उस मार्ग को बन्द कर देवें। यदि वह रूस की धमकी वा चापलूसी को मानकर ज़ार के जहाज़ों को निर्द्वन्द्व मार्ग दे देवे, तो अन्य सम्राट लोग भी वही स्वत्व प्राप्त करने का दावा करने में देर न करेंगे और तब कान्स्टैण्टिनोपुल (कुस्तुन्तुनिया) प्रत्येक सामुद्रिक जाति का आश्रय हो जायगा। यदि सुल्तान, जैसा कि अधिकतर सम्भव है, अपने सन्धि के स्वत्वों पर ऐंड करै तो रूस अपने जहाज़ों के जाने के लिये बल पूर्वक मार्ग बनाने का यत्न कर सकता है। ओटोमैन साम्राज्य के प्रतिकूल यह कार्रवाई एक ऐसी होगी जिस से तुर्क लोगों की क्रोधाग्नि भभक उठेगी। उन्हें अपने पैतृक शत्रु मास्कोवालों को अपना पुराना ऋण चुकाना है और दूसरी रूस रूम की लड़ाई जिसमें उसकी सहकारी घटनायें बालकन राज्यों के उत्पात में योग देने से अवश्यमेव घटित होगी, दक्षिण-पूर्वीय यूरोप को और सम्भवतः एशिया माइनर को भी रक्त की धारा में निमग्न कर देगी।

जो संग्राम इस समय हो रहा है उसकी जगद् व्यापिनी गुरता के सिद्ध करने के लिये अलम् कहा जा चुका। ऐसा बोध होता है कि यह प्रत्येक बिचारशील मनुष्य का धर्म्म है कि वह इस युद्ध की बाढ़ को ध्यान से देखता चले कि उसे ज्ञान हो जावे कि एक साधारण साम्राज्य भी सत्य श्रम से थोड़े काल के ही बीच कैसी कैसी अनहोनी बातें कर दिखाने के योग्य हो सकता है।

भारतवर्ष और जापान।

जापान स्वतंत्र है भारत परतंत्र; जापान ने विदेशी राज्य का जूआ अपने कन्धे पर कभी नहीं रक्खा, भारत को आज गुलाम हुए कई हज़ार वर्ष हो गए। जापान में यदि अत्या-

चार हुए तो वहीं के लोगों की ओर से, भारत को इसकी सन्ताल ने तो दुख दिया ही पर किसी किसी विदेशी लूटेरे और सम्राट ने इसको ऐसा शिकार बनाया कि इसकी जिव- नाग्नि मन्द हो गई। महाभारत के पराक्रमी योधाओं की सन्तान ख्याली भूत प्रेत इत्यादि से डरने लगी। वेदों और उपनिषदों की शिक्षा को अपने जीवन का आश्रय मानने वालों के वंश को आज धार्मिक भाव की न्यूनता और स्वार्थ परता और आलस्य ने आ घेरा। इसके विपरीत जापान आज उन्नति के शिषर पर चढ़ रहा है। जो लोग कल तक यह कहते थे कि केवल पाश्चात देशों को ही पूर्वीय देशों में सभ्यता की शिक्षा देने का अधिकार प्राप्त है वे आज यह मानते हैं कि योरोप भी एशिया के सामने सिर झुका सकता है। एशिया की प्राचीनता का तो सारा संसार बड़ाई करता है पर उसकी वर्तमान अवस्था को देख कर किसी को भी श्रद्धा नहीं होती थी। यदि कोई प्राचीन धर्मशास्त्र का जानने वाला विदेशी एशिया की अवस्था पर विचार करता तो उसके चित्त में यहां के निवासियों पर दया का भाव उत्पन्न होता परन्तु साधारण योरोपियन हमारी चाल चलन, नीति रीति को देखकर हम से घृणा करने लगते। आज जापान उसी एशिया का गौरव सारे संसार पर जतारहा है। प्रश्न यह उठता है कि भारतवासियों से इससे क्या मतलब। इसका उत्तर लोग अपने हृदय ही से पूछें। यह सच है कि रुस जापान की लड़ाई का विवरण योरोप और अमेरिका के लोग अधिक उत्साह के साथ पढ़ते हैं पर वहां के पढ़ने वालों में सौ में से ९९ रुस से घृणा करते हैं पर भारतवर्ष में यद्यपि रुस का नाम कुछ प्यार से नहीं लिया जाता परन्तु भारत की शिक्षित सन्तान जापान की ओर ऐसे निहारती है कि जैसे कोई आदर्श की ओर देखे। जापान-निवासी बहुत सी

बातों में हमारे ऐसे है। उनके धार्मिक विश्वास यद्यपि भिन्न हैं परन्तु कई अंशों में हमारे विश्वासों से समता रखते हैं। कर्म के सिद्धान्त में उनको भी विश्वास है। वे भी देवी देवताओं को पूजते हैं। उनसे हमारी सामाजिक अवस्था भी मिलती है। प्रत्येक जापानी प्रातः काल उठता है दिन में कम से कम दो बेर नहाता हैं, यदि न नहाए तो लोग हँसते हैं। उनका खाना पीना पहिनना हमारी तरह से सादा है। उनकी स्त्रियां भी अपना समय घर के काम काज में बिताना सौभाग्य समझती हैं। केवल इनहीं बातों में ही हमारी उनकी समता नहीं है। उनको जो अवसर प्राप्त हुए वैसे ही हम को भी थोड़े बहुत प्राप्त हैं। उनकी कठिनाइयां हमारी कठिनाइयां हैं। उनकी आशाएँ हमारी आशाएँ हैं। उन्नीसवीं शताब्दी का अर्द्ध भाग समाप्त होने पर जापान और योरोप से सम्बन्ध आरम्भ हुआ और प्रायः उसी समय से भारत में अङ्गरेजी शिक्षा, अङ्गरेजी रीति, नीति के प्रचार का भी प्रारम्भ है। यदि कोई पुरुष सावधान और निष्पक्षपात हो कर विचार करे तो वह भली भांति समझ सकता है कि अङ्गरेजों का राज्य भारतवर्ष के लिये एक प्रकार की संजीवनी औषधि हुआ है। इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं है कि जिस प्रकार के लोग हमारे ऊपर शासन करने के लिये योरोप से आते रहे वे आत्मिक बल में, सदाचार में, विद्या में, शासन करने के गुणों में उन लोगों से कई गुना ऊंचे थे कि जिन पर वे शासन करते थे। जिन लोगों को अब भी अङ्गरेज़ों से अधिक मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है वे इस बात को जानते हैं कि एक साधारण योरोपियन दूसरे साधारण हिन्दुस्तानी से आत्मिक बल में, परिश्रम में, व्यवसाय में, अनुसन्धान करने की प्रवृति में, और फैले हुए काम को संभालने में बहुत बढ़कर है। यद्यपि महान पुरुष सब देशों में सर्वदा कम हुआ

करते हैं परन्तु जितनी संख्या संसार को उपकार पहुंचाने वालों की इस समय योरोप में है उतनी हमारे देश में नहीं है। यह हमारा कभी तात्पर्य नहीं है कि कोई भी योरोपियन बुरा नहीं है पर अधिकांश लोगों के गुण दोष देखकर किसी जाति के गुण दोष निश्चित किए जाते हैं। सारांश यह है कि जिस प्रकार जापान के पुनरोद्धार का कारण योरोप निवासियों का समागम है उसी प्रकार भारतवर्ष की वर्तमान जाग्रित अवस्था का कारण भी अङ्गरेज़ों का राज्य है। इस देश की उन्नति बहुत ही धीमी है। जापान की उन्नति की उपमा भूकंप से दी जाती है। जिस जापान में चालीस वर्ष भी नहीं हुए कि एकही समय में दो राजा थे जिनके कारण प्रजा में भीषण विरोध रहता था, वही आज योरोप की भांति प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रजा से शासित होता है। जिस जापान के लोगों को ४५ वर्ष हुए कि एक योरोपियन यात्री लेडी हडसन के नाव पर चढ़ कर झील में सैर करने और ज्वाला मुखी पर्व्वत पर चढ़ने का साहस करने से आश्चर्यित हुआ था वही आज जर्मनी, फ्रान्स इत्यादि देशों में विद्योपार्जन करके योरोप की प्रशंसा का पात्र बन रहा है। इस अद्भुत घटना के कई कारण हैं। यह सत्य है कि हमारी गवर्मेण्ट एक सभ्य योरोपियन गवर्मेण्ट है जिसने हम पर ऐसे उपकार किए हैं कि उनको भूलना कृतघ्नता है पर इसके साथ ही यह भी याद रखने के लायक़ बात है कि यह गवर्मेण्ट विदेशी गवर्मेण्ट है। हम चाहे कितना ही आन्दोलन करें पर जब लों हमारे ऐसी विदेशी गवर्मेण्ट अपने अधिकांश उच्चपदाधिकारी विदेश से बुलवाएगी, जब लों वह यहां के निवासियों की सम्मति सुशिक्षित भारत वासियों के द्वारा विद्योन्नति में, शासन के संशोधन में टैक्स के घटाने, बढ़ाने और उसके वसूल करने में और उचित नियमों के बनाने में न लेगी तबलों चाहे वह गवर्मेण्ट कैसी

ही सर्वप्रिय बनी रहे पर देश की आर्थिक अवस्था को नहीं सुधार सकती। अङ्गरेजी गवर्मेण्ट से यहां के निवासियों को भक्ति है और रहेगी क्योंकि इससे अच्छी गवर्मेण्ट हमारे लिये दूसरी नहीं हो सकती पर तिस पर भी यह बात शोचनीय है कि प्रायः प्रत्येक उपयोगी विषय पर सरकार की जो सम्मति रहती है यहां के देशहितैषियों की उसके बिलकुल विपरीत होती है। भारतवासी कहते हैं कि हमारी आर्थिक अवस्था बहुत बुरी है, अकाल पर अकाल पड़ रहा है। प्लेग से लोग दुखित हैं, मालगुज़ारी और दूसरे टैक्स ज्यादः हैं और इनके वसूल करने की रीति बडी कष्टदायक है, गवर्मेण्ट यह कहती है कि लोग अमीर होते जाते हैं। भारत का धन बढ़ रहा है। यदि यहां के लोग दुखी हैं तो अपनी फजूल खर्ची के सबब से। इस पुस्तक में इस विषय पर बिचार नहीं किया जा सकता कि इन दोनों दलों में कितने अंश तक किस का कहना सच है। हमको केवल यही दिखलाना है कि भारतवर्ष में इस समय दो पार्टी हो रही है एक प्रजा की पार्टी जो सलाह देती है कि मालगुज़ारी का अधिक अंश विद्या की उन्नति में, और कला कौशल की वृद्धि में व्यय किया जाय, भारतबासियों को सरकारी पदों पर और डिष्ट्रिक्ट और म्युनिसिपल बोर्ड में अधिक अधिकार दिए जांय, देशी रियास्तों को प्रवन्ध में कुछ अधिक स्वतंत्रा दी जाय इत्यादि, इसके विपरीत गवर्मेण्ट पार्टी यह चाहती है कि विद्योन्नति भारतवासी अपने ही धन और परिश्रम से कर लें और जहां तक हो अङ्गरेजों के अधिकार कम न होने पावें। इन दोनों पार्टियों के सिद्धान्त भिन्न भिन्न रूप में प्रगट होते हैं और कभी कभी भयङ्कर रूप धारण करते हैं। इस प्रकार का आन्दोलन भारत ऐसे देश में आश्चर्य की बात है कि जहां "कोऊ नृप होय हमें का हानी। चेरि छाड़ि न होउब रानी"

की शिक्षा पिछले कई सौ वर्षों से दी जा रही है। पर यह सब योरोपीयन प्रणाली की शिक्षा का प्रभाव है। वर्तमान समय की शिक्षा में चाहे कितनी त्रुटियां हों परन्तु यह मनुष्य में आत्म गौरव, देशहितैषिता और सच्ची स्वतंत्रा के अंकुर जमाती है जिसका फल धर्म, समाज, और राज्य प्रणाली पर प्रगट हो रहा है। खेद इतना ही है कि हम लोगों में आत्मिक बल नहीं है। अच्छे से अच्छे काम हम लोग उठाते हैं परन्तु जरासी भी कठिनाई देख कर उसको छोड़ देते हैं। हम में देश का हित ऐसा प्रबल नहीं है कि वह आपस के झगड़ों को जो मत भेद से हुआ करते हैं दबा दे। हमारी सामाजिक अवस्था शोचनीय है, हमारा धर्म अनिश्चित है, हमारी राजनैतिक अवस्था का सुधार हमारे अधिकार से बाहर है। यदि संसार में कोई देश है कि जहां के निवासियों को दत्तचित्त हो अपने प्यारे देश के लिये उत्साह के साथ काम करने की आवश्यकता है तो वह भारतवर्ष है जहां का प्राचीन विशुद्ध धर्म सारे संसार में माननीय था और माननीय होने योग्य है और जहां की सामाजिक रीति नीति वैज्ञानिक और सरल थी।

इस पुस्तक के पढ़नेवालों को जापान देश की कथा से बहुत शिक्षा प्राप्त होगी परन्तु पहिली शिक्षा जो जापान हमें देता है वह विद्या सम्बन्धी है। इस समय में कोई देश उन्नति नहीं कर सकता जब तक कि उसके निवासी विद्या में उन्नति न करें। जापानी विद्यार्थी विद्योपार्जन के लिये अमेरिका जाकर छोटी मज़दूरी करना बुरा नहीं समझते। कई जापानी विद्यार्थी जो एक शब्द अङ्गरेजी नहीं जानते और जिनके पास एक पैसा भी नहीं होता किसी न किसी प्रकार अमेरिका पहुंच कर नौकरी करलेते हैं। पर जो उनको नौकर रखता है उससे इतनी शर्त करवा लेते हैं कि उनको स्कूल जाने में पूरी

स्वतंत्रता हो। इस कारण वे वेतन भी थोड़ा ही लेते हैं। कोई किसी बड़े आदमी की रोटी बनाता है या उसके घर का काम करता है। जैसा कि एक अमेरिका के पत्रसम्पादक ने लिखा है कि अमेरिका में जापानी विद्यार्थी एक तरफ तो आलू छीलते हैं और दूसरी तरफ रेखा गणित की शकलें हल करते हैं। वे लोग जब कुछ धन एकत्रित करलेते हैं तो किसी कालेज में भरती होजाते हैं अथवा कालेज में पढ़ने की योग्यता प्राप्त करने पर यदि धन का अभाव हो तो किसी बोर्डिङ्गहौस में विद्यार्थियों की नौकरी करलेते हैं और कालेज में साथही साथ पढ़ने भी चलते हैं। येही लोग जापान के गौरव को बढ़ाने वाले हैं। भारतवर्ष में जैसा चाहिए विद्या का प्रेम जरा भी नहीं है। जो लोग पढ़ते हैं उनमें व्यवसाय नहीं, अनुराग नहीं। जो पढ़ लिख कर तय्यार होते हैं वे फिर पुस्तकों को उठाकर नहीं पढ़ते। सच पूछिए तो भारतवर्ष में यदि कहीं विद्या का यथार्थ प्रेम किसी कदर देखने में आता है तो वह संस्कृत के विद्यार्थियों में। उनकी प्रणाली चाहे सुधार के योग्य हो परन्तु संस्कृत के विद्यार्थी और पंडित जिस परिश्रम और अनुराग से वृद्ध होने परभी पुस्तकावलोकन करते हैं उसका आधा भी यदि दूसरे विद्यार्थी और शिक्षित लोगों में होता तो अच्छे ग्रन्थों और पत्रों का अभाव भारत में न रहता।

दूसरी शिक्षा जो हमको जापान से मिलती है वह उसकी कार्य कुशलता तथा साहस है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि विद्या की वृद्धि प्रत्येक देश की उन्नति का पहिला लक्षण है परन्तु ऐसे देशों का भविष्य जिनमें बुद्धि बल के साथ साथ आत्मिक बल भी बढ़ता चले, अवश्य आशामय है। यद्यपि भारतवर्ष में विद्योन्नति के चिन्ह चारों तरफ देख पड़ते हैं और कभी कभी ऐसे विद्वान भी उत्पन्न हो जाते हैं जो संसार की उन

जातियों में भी आदर पाने योग्य हैं कि जिनको लोग आज कल सभ्य जाति के नाम से पुकारते हैं परन्तु अभी भारत में ऐसे लोगों की संख्या कम है कि जो एक धुन से काम करते हों, जिनको संसार की निन्दा और प्रशंसा का कुछ भी विचार न हो अर्थात् जो अपनी धुन के पक्के हों। हमलोग यदि कांग्रेस करते हैं तो साल में सिर्फ चार रोज़ असाधारण उत्साह प्रगट करके रहजाते हैं। यदि समाज संशोधन अथवा अन्य भिन्न भिन्न प्रकार के सुधार की सभाएं करते हैं तब भी किसी एक व्यक्ति विशेष की अद्भुत वक्तृता से रीझ कर हमलोगों के हृदय उस क्षण ऐसे होजाते हैं कि मानों देशहितैषिता के भाव ने पूरी जगह करली परन्तु यथार्थ तो यह है कि जिस ओर देखिए उस ओर काम करनेवालों का अभाव है। भारतवासियों का कोई उद्योग लीजिए उसमें थोड़े दिन ही शामिल होने पर मालूम हो जायगा कि काम करनेवाले—बलिदान होने वाले बहुत ही कम हैं। इसके विपरीत जापान के बहुत से बालक अपना जीवन अपने देश के अर्थ स्वाहा करने को प्रस्तुत हैं। भारतवासियों को आज कल जैसा आनन्द प्राप्त है कई हज़ार वर्ष से नहीं हुआ था। इस समय में लोगों को लड़ाईयों में खून बहाने की आवश्यकता नहीं है। इस समय आत्मिक बल की आवश्यकता देश और धर्म के अर्थ है। एक अङ्गरेजी कहावत है कि "शहीद होकर मरने से जीते जी शहीद होना कठिन है"। संसार के जितने अच्छे काम हैं उनकी ओर भिन्न भिन्न लोग भिन्न भिन्न भाव से निहारते हैं। अधिकांश लोग तो यही कह कर रह जाते हैं कि हां काम तो अच्छा है। परन्तु ऐसे कम लोग होते हैं कि जो उसके लिये कुछ उद्योग करें और ऐसे लोगों की संख्या तो बहुत ही न्यून होती है कि जो अपना सर्वस्व किसी अच्छे काम के लिये बलिदान कर दें। ऐसे लोगों की अधिकता तथा

न्यूनता किसी देश की सभ्यता के निरीक्षण करने की बहु ही सच्ची कसौटी है। वे देश सभ्य हैं कि जो संसार में धर्म विद्या और बुद्धि की वृद्धि में सर्वदा तत्पर रहते हैं और देश असभ्य हैं कि जहां के लोग विद्या और आत्मिक बल न्यून हों। इसी प्रकार के भावों का समर्थन मिसेज़ ऐनी बेसण्ट ने बड़े सुन्दर शब्दों में किया है कि जिसको उद्धृत कर के यह पुस्तक समाप्त की जाती है।

"Plenty of people wish well to any good cause, bu very few care to exert themselves to help it, and stil fewer will risk anything in its support. "Some on ought to do it, but why should I?", is the ever re echoed phrase of weakened amiability. "Some on ought to do it, so why *not* I?" is the cry of som earnest servant of man, eagerly springing forward t face some *perilous* duty. Between these two sentence lie whole centuries of moral evolution.